Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इसे [illegible]त कर रखिए

(२० फरवरी १९७० तक ही भुनाया जा सकेगा)

यह पांच रू० का कूपन है

निम्न कूपन का मूल्य ५) है। इसे काट कर सावधानी से हमें भेजिए और साथ में १५) के पोस्टल आर्डर "जन-ज्ञान-प्रकाशन" के नाम। हम आपकी ओर से किन्हीं भी २ मित्रों को, पुस्तकालयों को वर्ष भर तक 'जन-ज्ञान' भेजते रहेंगे। या 'जन-ज्ञान' द्वारा प्रकाशित कम से कम २०) या अधिक पुस्तकों का आदेश भेजिए। और साथ में यह कूपन और शेष मूल्य। आपका यह कूपन ५) में गिना जाएगा। एक सदस्य केवल एक ही कूपन प्रयोग कर सकेंगे। —व्यवस्थापक

श्री व्यस्थापक जी ! सादर नमस्ते।

मैं १५) और यह कूपन भेज रहा हूँ। कृपया निम्न दो सदस्यों को एक वर्ष 'जन-ज्ञान भेजते रहें।

सदस्य संख्या..... भवदीय.....

पूरा पता.....

१. .....

.....

.....

२. .....

.....

.....

यह कूपन भेज कर 'जन-ज्ञान' के सदस्य दो सदस्यों को अपनी ओर से १५) भेज कर एक वर्ष का सदस्य बना सकते हैं। या कम से कम २०) की पुस्तकें लेकर उसमें यह ५) के बदले दे सकते हैं। —व्यवस्थापक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संक्षिप्त अंग्रेजी

सत्यार्थप्रकाश

LIGHT OF TRUTH

अब तैयार है

मूल्य ७५ पैसे ५०) सैकड़ा

णिकों को चुनौती दें

मूर्ति पूजा की हानियाँ

भारी संख्या में बाँटें

महर्षि दयानन्द लिखित

१०) सैकड़ा

"जन-ज्ञान" शिवरात्रि के शुभ अवसर पर

महान् विद्वान् स्व० स्वामी अनुभवानन्द जी शान्त द्वारा प्रस्तुत

४०० वेद मन्त्रों की हृदयग्राही प्रेरक व्याख्या, भेंट करता है—

वैदिक-अध्यात्म-ज्योति

नास्तिकता के प्रवाह को वैदिक अध्यात्म के अमृत से प्रकाश में बदलने के लिए आज ही अपना आदेश भेजें

मूल्य २) । १५) की १० प्रति । ३५) की २५ प्रति । ६०) की ५० प्रति और १००) की १०० प्रतियाँ

"जन-ज्ञान" के सदस्यों को यह अंक मार्च अंक के रूप में मिलेगा। पर किसी को भी किसी भी स्थिति में यह दुबारा न भेजा जायेगा। सुरक्षित मंगाने के लिए ७५ पैसे के टिकट भेजें।

—व्यवस्थापक

जन-ज्ञान-प्रकाशन

१५६७ हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भारतेन्द्रनाथ साहित्यालंकार
के संरक्षण-निर्देशन में
प्रकाशित

धरती के प्रत्येक मानव के हृदय
मन्दिर पर "वेद-ज्ञान" की पावन
पताका फहराने के लिए
कृत संकल्प

आर्य जनता का
अपना
प्रतिनिधि प्रकाशन

"जन-ज्ञान"

(मासिक)

१५९७ हरध्यानसिंह मार्ग
करोलबाग नई दिल्ली-५
फोन : ५६९६३९

सम्पादक
—राकेश रानी—

वार्षिक मूल्य	१०)
एक प्रति	८० पैसे
विदेश में	एक पौण्ड

वर्ष २ ● अंक १०

एक प्रश्न

●

अंधेरा अंधेरा रहेगा यह कब तक,
उजाला तरसता रहेगा यों कब तक,
सफ़र यह अधूरा, क्या पूरा न होगा,
सच्चाई का सूरज छिपेगा यों कब तक ?

उभरते सवालों का उत्तर नहीं है,
हमारी रवानी रुकी जा रही है,
नहीं कोई साथी, न हमराज़ कोई,
सभी के हृदय की है आवाज़ सोई

तड़पता हूं दिन-रात, बदले यह दुनियां,
नई इक बनाऊं यह सुन्दर सी दुनियां
जहाँ पाप छाया न आए नज़र भी
सजी स्वप्न सी एक उजली सी दुनियां।

जो सच को ही अपना हाँ रहबर बनाए
जो झूठों की हस्ती जमीं से मिटाए,
सभी एक होकर बनें भाई-भाई,
तो जन्नत का सपना हो साकार जाए।

हिमालय की गोदी में फूला वतन है,
गंगा के गीतों से गूंजा चमन है,
मगर आज पापों की ज्वाला में झुलसा,
जला जा रहा क्यों ये प्यारा वतन है ?

वतन पर है संकट, धरम कांपता है,
सिसकता हुआ हर बदन कांपता है,
भलाई की मांगों का सिन्दूर उजड़ा,
उजड़ता चमन अब कफ़न मांगता है।

मगर प्रश्न मेरा है तुम से ओ भाई,
छुरी यों चला पाएगा क्या कसाई ?
वेदों की वाणी यह ऋषियों की धरती
बचा क्या न पाएंगे ? ऋषि के सिपाही।

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आदरणीय! सादर नमस्ते।

आपके स्नेह-सौहार्द व आशीर्वाद से 'जनज्ञान' बढ़ा और अब हमारी इच्छा है कि यह शिवरात्रि से साप्ताहिक रूप में जन्म ले। किन्तु इस इच्छा की पूर्ति आपके हाथ में है।

आप हमारी इच्छा को अपनी इच्छा समझ "साप्ताहिक जनज्ञान" को सजधज और आकर्षक रूप में निकालने के इच्छुक हों तो कृपया जैसे भी हो हमें अपना सहयोग प्रदान कीजिये।

१- १०१) भेज कर आजीवन सदस्य बनें। आपको जीवन भर "जनज्ञान" मिलता रहेगा।

२- आजीवन सदस्य न बन सकें तो अधिक से अधिक साधारण सदस्य बनायें। ताकि साप्ताहिक पूरा आ में दी छप सके।

३- अपनी शक्ति भर आड़े साप्ताहिक के प्रकाशनार्थ भेजें व अन्यों से भी भिजवायें ताकि "जनज्ञान" साप्ताहिक शान और गौरव से निकल सके।

हमारे पास भावना और लालसा के अतिरिक्त और कुछ भी तो नहीं है। अब यदि आप आर्य समाज के एक शक्तिशाली साप्ताहिक पत्र को जन्म देने में हाथ बटायेंगे तो वस्तुतः यह एक ऐतिहासिक शुभ कार्य होगा।

सहयोग प्राप्ति के लिये आपके द्वार पर आई हूं इस विश्वास से कि बहन को आप खाली हाथ नहीं लौटायेंगे।

आर्य समाज को महर्षि दयानन्द का आर्य समाज बनाने के लिये आपसे सहयोग मांग रही हूं। आपकी बहन

५.१.७०

शकुन्तला।
संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और हम हार गए.....

पर फिर भी पैर पीछे न हटेंगे

हमने चाहा था कि शिवरात्रि से "जन-ज्ञान" साप्ताहिक रूप में प्रकाशित किया जाए। जैसे आर्य समाज के और पत्र निकलते हैं वैसा साप्ताहिक तो हम जब चाहें निकाल सकते हैं क्योंकि 'जन-ज्ञान' मासिक का व्यय इन साप्ताहिकों से कहीं अधिक है।

किन्तु हमारे मस्तिष्क में तो धर्मयुग—हिन्दुस्तान जैसे साप्ताहिक का चित्र है। हम तो सर्वश्रेष्ठ ढंग से काम करने में ही विश्वास रखते हैं। इसीलिए **हम ने केवल १०० आजीवन सदस्य माँगे थे।** किन्तु ऐसा प्रतीत हो रहा है की अभी हमें और तपस्या-साधना करनी होगी। जब तक जन-मानस में हमारे कार्य के प्रति अगाध विश्वास पैदा नहीं होता, हम सफल नहीं हो सकते।

हमें अब तक १०० सदस्य नहीं मिले...तो वस्तुतः हम हार गए। पर हार कर भी हम पैर पीछे नहीं हटाएंगे। राजधानी से एक अत्युत्तम साप्ताहिक निकालने के लिए हमारा यत्न जारी रहेगा और जब आर्य जनता यह स्वीकार करेगी की हमारे कार्यों से वास्तव में महर्षि दयानन्द का लक्ष्य पूरा होने की दिशा में कार्य हो रहा है, तब हमें सफलता निश्चय ही मिलेगी। धन्यवाद ! उनका जिन्होंने प्रार्थना स्वीकार की.....प्रभु कृपा करें कि हमारा मन सदा लक्ष्य की ओर चलने में सुदृढ़ रहे.....

एक अवसर और

कुछ सदस्यों ने हम से आजीवन सदस्यता का शुल्क १०१) भेजने के लिए १५ फरवरी तक का और समय माँगा है। अतः उन सभी का आदर करते हुए १५ फरवरी तक १०१) आजीवन सदस्यता शुल्क स्वीकार किया जाएगा। १५ फरवरी के बाद आजीवन सदस्यता शुल्क १५१)ही होगा। इस सम्बन्ध में पुनः पत्र व्यवहार न करें।

यदि १५ फरवरी तक भी १०० सदस्यों की मांग पूरी हो गई तो आर्य समाज स्थापना दिवस से जन-ज्ञान-साप्ताहिक कर दिया जाएगा।

आर्यजन ! सब कुछ आप पर ही निर्भर है। आप जैसा चाहेंगे, सहयोग देंगे, वैसे ही किया जाएगा क्योंकि आपका स्नेह, आशीर्वाद ही हमारी शक्ति है।

—भारतेन्द्र नाथ

नए आजीवन सदस्य

२२=ला० मेलाराम जी दिल्ली। २३=श्री हुक्म चन्द जी बग्गा दिल्ली।
२४=श्री राम औतार जी दिल्ली। २५=श्री रामचन्द्र गुप्त दिल्ली।
२६=श्री लालमन आर्य हिसार। २७=श्री हरस्वरूप गुप्ता जबलपुर।
२८=श्रीमति शैलकुमारी वाराणसी=श्री हौसिलासिंह जी वाराणसी।
३०=श्री ओमप्रकाश बाजारी ब्यावर। ३१=श्री शान्तिस्वरूप जी अमृतसर।
३२=कविराज हरनामदास बी० ए०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान के नियम

१. जन ज्ञान मासिक पत्रिका है। इसका उद्देश्य—(अ) महर्षि दयनान्द के लक्ष्य को पूर्ण करना। (ब) संसार के प्रत्येक व्यक्ति तक वेद का पावन संदेश पहुँचाना। (स) अज्ञान, पाखण्ड की समाप्ति के लिए प्रत्येक सम्भव पग उठाना है।

२. "जन-ज्ञान" में व्यक्गित राग द्वेष और पार्टी बाजी के लेख व सूचनायें किसी भी स्थिति में प्रकाशित नहीं किए जायेंगे।

३. वैदिक सिद्धांतों के विरुद्ध विज्ञापनों का प्रकाशन भी किसी भी स्थिति में नहीं होगा।

४. जन-ज्ञान का वार्षिक शुल्क दस रुपया। एक प्रति ८० पैसे है। सदस्यों को विशेषांक वार्षिक मूल्य में ही दिए जायेंगे।

५. प्रत्येक माह की दो तीन तारीख को 'जन-ज्ञान भेज दिया जाता है। यदि दस तक भी न मिले तो समझिए आपका 'जन-ज्ञान' कोई और पढ़ रहा है। दस तारीख तक 'जन-ज्ञान' न मिले तो अपने पोस्ट आफिस को पत्र लिखें और एक प्रति हमें भेजें। पत्र प्राप्त होने पर 'जन-ज्ञान' दुवारा विना टिकट लगाये वैरंग भेजा जाएगा। **बीस तारीख के बाद किसी भी शिकायती पत्र पर ध्यान नहीं दिया जाएगा।**

६. विशेषांक सुरक्षित मंगाने के लिए पचहत्तर पैसे के टिकट पन्द्रह दिन पूर्व आने चाहियें। विशेषांक दुवारा न भेजे जायेंगे।

७. किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या लिखना न भूलें।

८. समस्त चैक, मनीआर्डर आदि **"जन-ज्ञान-प्रकाशन"** के नाम भेजें।

९. नए सदस्य धन भेजते समय 'नया सदस्य' शब्द अवश्य लिखें और मनिआर्डर कूपन पर पूरा पता अवश्य लिखें।

१०. जन-ज्ञान के सदस्यों को 'जन-ज्ञान प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित सम्पूर्ण साहित्य पौने मूल्य में दिया जायेगा।

प्रबन्धक

जन-ज्ञान प्रकाशन

१५९७, हरध्यानसिंह रोड़, करौल बाग,

फोन : ५६६६३९ नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्पादकीय

चूड़ियाँ मत पहनो !

"जीवन" मुस्कराने का नाम है, रोना तो जीवन नहीं, फिर पता नहीं क्यों, रुदन हमारे जीवन का चिर संगी बन गया है और उसके हमजोली, निराशा द्वेष और चिन्ता भी बिना बुलाए मेहमान की तरह घर आंगन में आकर बैठ गए हैं। आनन्द और शांति स्वप्न और आदर्श की भांति कल्पना लोक की वस्तु बन गए हैं। मनुष्य पशु बन कर धरती पर उन्मुक्त नर्तन कर जो चाहता है करने में अपने को स्वतंत्र अनुभव कर रहा है, किन्तु फिर भी वह अपने से असंतुष्ट रह कर पीड़ा अनुभव करता हुआ, पीड़ा ही बांट रहा है।

मनुष्य कहाँ है ? उस की स्थिति क्या है ? उसका लक्ष्य क्या है···यह सब प्रश्न परिस्थितियों के प्रवाह में उलझे ऐसे विचित्र हो गए हैं कि सब कुछ उलझन में पड़ गया है···और कभी कभी तो यह प्रतीत होता है कि जीवन के आधार विन्दु शून्य में सिसकने लग गए हैं। मनुष्य अपनी सत्ता को खोकर शरीर को ही सत्य समझ कल्पना लोक में उड़ा जा रहा है। अपने को मिटाकर वह अपनी विजय के गीत गा रहा है।

छलना ही जीवन का सत्य बन गयी है। मृत्यु का मार्ग ही आनन्द की राह हमने मान लिया है। सर्वनाश में निर्माण समझ हम गीत गा रहे हैं किन्तु उस के स्वर में कष्टों की झंकार प्रतिध्वनित हो रही है। यह झंझा है कुछ ऐसी कि प्राणों की गति का कंपन हम से रूठ गया है।

साधन साध्य बन गए—निराशा में आशा दीखने लगी और स्वप्न में हम सत्य की खोज कर रहे हैं, ऐसी पथ भ्रष्टता ने सभी कुछ, जो शांति और आनन्द दे सकता था दांव पर लगा दिया है। मनुष्य मर रहा है पर वह समझता है कि मैंने जीवन पा लिया। यह मूढ़ता अविद्या को ही विद्या समझने और विद्या की विस्मृति के कारण है।

आज आवश्यक्तइस बात की है कि हम धरती के प्रत्येक मनुज के अंतर में जीवन की प्यास पैदा करें। ज्ञान—की झंकृतियों से वीणा के स्वरों में वह गीत बजाएं कि अंधकार का परदा दूर हो और शाश्वत चिरन्तन सत्य हमारे समीप आए। वस्तुतः इस महान् कार्य की सफल पूर्ति हेतु ही महर्षि दयानन्द द्वारा आर्य समाज की स्थापना हुई थी। हमारा काम ईंट—पत्थरों की मोह माया में उलझना नहीं था, अपितु चलते फिरते जीवित मन—मंदिरों में सत्य की स्थापना ही ऋषि को इष्ट थी। उदात्त लक्ष्य की साधना का साधक था आर्य समाज। पतित पावन, ज्ञान-प्रसारक है आर्य समाज ! मेरे गुरु देव दयानन्द का आर्य समाज मनुष्य को मनुष्य बनाने का भाव लेकर ही स्थापित हुआ था। हम भी उसी आर्यसमाजके पुजारी हैं जो ईंट पत्थरों का नहीं, मनुष्य का निर्माण करता है।

आप भले ही रुष्ट हों किन्तु तथ्य यह है कि ऋषि दयानन्द की ज्योति को तालों में बन्द करने के अपराधी ऋषि के अनुयायी ही हैं। धरती तो प्यासी आज भी सिसक रही है, उस की तृप्ति का साधन केवल ऋषि दयानन्द के पावन संदेश में है। संदेश फ़ैलना चाहिए और आर्य समाज को सारे काम छोड़ कर दयानन्द का काम पूरा करने में लगना चाहिए। इसी भावना से हमने कार्य आरम्भ किया है। साधन के नाम पर केवल भावना लेकर हम चले हैं और चलते रहेंगे। जिन्हें ईंट-पत्थरों से प्यार है वे उन से करते रहें, हम उन की सद्बुद्धि के लिए प्रभु से प्रार्थना करते रहेंगे। जिन्हें गृह-युद्ध ही इष्ट है वे वस्तुतः दयानन्द के अरमानों की हत्या कर रहे हैं यह जब वे अनुभव करेंगे, तो राह पर आएंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपने निर्बल हाथों में, 'वेद' पताका लेकर बढ़ते जाना ही हमें इष्ट है। हमारी इच्छा है, कामना है कि दयानन्द की जय बोलने वाला हर भाई और बहन अपने हाथ में वेद पताका उठाए। अपना सर्वस्व दयानन्द के लिए अर्पित करे और फिर प्राण-प्राण के ज्योतित स्वर से जीवन की मधुमय झंकार सुन कर वह दयानन्द की विजय साकार देखने को मचले, यह भावना लेकर हमने अलख जगाई है। निद्रा टूट रही है पर मोह का नशा अभी गहरा है। पद-स्वार्थ-भवन और गद्दियों की शराब ने हमारा मस्तिष्क विकृत कर दिया है। हम देखते हुए भी देखते नहीं, सुनते हुए भी सुनते नहीं, जानते हुए भी जानते नहीं, वस्तुतः ऐसे व्यक्तियों को प्रभु ही सद्बुद्धि दे सकता है।

'जन-ज्ञान' संसार के हर व्यक्ति तक 'वेद' प्रकाश पहुंचाना चाहता है। वह पहुंचा रहा है। प्रभु जैसे-जैसे साधन जुटाते जाएंगे, प्रकाश फ़ैलता जाएगा। हमारे शरीर का एक-एक रोम जीवित जल कर भी यदि प्रकाश फैलाने में लगेगा--तो लगाएंगे। भूखे-प्यासे-एकाकी रह कर भी हम दयानन्द के गीत गाएंगे। कोईसाथ दे या न दे, किसी की नींद खुले या न खुले, हमारा कारवाँ बढ़ता जाएगा, हम अंधकार को मिटाते, प्रकाश फैलाते, जीवन और आनन्द के गीत गाते मुस्कराते बढ़ते जाएंगे। दयानन्द के अनुयायी जिस दिन क्रांति के लिए तैयार होंगे, जिस दिन दयानन्द के भवनों में ज्ञान जागेगा, जिस दिन सिर पर कफ़न बांध आर्य वीर विश्व विजय के लिए तैयार होंगे, तब प्राणों में गति आएगी, और वह हमारी सफलता का प्रथम दिन होगा।

आज तो वीरों ने चूड़ियों पहनी हैं, बधाई! नेताओं ने फूट-द्वेष और गृहयुद्ध को लक्ष्य बनाया है धन्यवाद! यदि यही आर्य मार्ग है तो अनार्य मार्ग क्या होगा?

भाइयो और बहनो! दयानन्द के उज्वल नाम की लाली तुम से धरती का जीवन और आनन्द मांगती है। जो दे सकें दें, जो न दे सकें वे अपनी वाणी से दयानन्द का पवित्र नाम तो कलंकित न करें।

बहन की पुकार पर आर्य प्राण देते थे, और आज बहन की याचना पर मार्ग भी नहीं बदल सकते। आपस का द्वेष भी नहीं छूटता। कैसा पतन है यह कुछ समझ नहीं आता। किसी के हृदय में हृदय और मस्तिष्क में ज्ञान हो तो सुनो, मेरी पुकार और आगामी शिव-रात्रि,—दयानन्द के बोध-दिवस पर सारे देश को जगाने की तैयारी करो। उठाओ पाखंड खंडिनी और करो अभियान विजय के लिए मूर्ति पूजा, अंधविश्वास, नास्तिकता, भोगवाद, इस्लाम और ईसाइयत, बढ़ते हुए संप्रदायों के बवंडर—यह जहरीली सांप्रदायिकता, भाषा-वाद और प्रांतीयता, चीन-पाक की दुष्प्रवत्तियां तुम्हें चुनौती दे रही हैं। शरीर में आर्य रक्त है तो नींद छोड़ो, मां का दूध पिया है तो कायरता का मार्ग छोड़कर हे आर्य! आर्य बनो। रणभेरी बज रही है···समय आ गया है जौहर का, मां के दूध का मोल चुकाने का—धर्म और सत्य पर संकट है। जीवन और आनन्द पर संकट है—मैं तुम से झोली फैला कर दयानन्द के अरमानों की रक्षा और धरती पर वेद—ज्ञान फैलाने की भिक्षा मांग रही हूँ··· क्या उत्तर है तुम्हारा।

मेरे भाई···चूड़ियाँ मत पहनो—'वेद-शक्ति' को उठाओ और धरती से मत—वाद मिटाकर—मनुष्य को मनुष्य बनाओ···यही मेरी प्रार्थना है···काश कि आर्य भाई और बहन इसे स्वीकर कर सकते—

शिवरात्रि बोध रात्रि बने यह आप पर निर्भर है—

—राकेश रानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

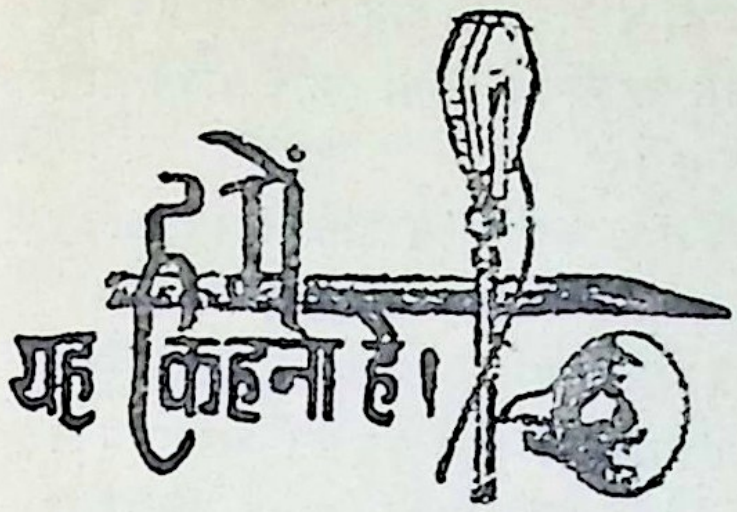

संघर्ष का मूल-आधार

जीवन का प्रत्येक क्षेत्र आज विवादग्रस्त है। पृथकता का रोग सर्वत्र विकास पा रहा है। मनुष्य और मनुष्य के बीच की खाई बढ़ती हुयी सर्वनाश का सामान जुटा रही है। देश, जाति, प्रांत, पार्टी, दल के नाम पर संघर्ष जारी है। जिस के पास जो कुछ है वह अपने स्वार्थ और दूसरे के विनाश के लिए दांव पर लगा चुका है।

इस संघर्ष ने शाँति का हरण कर लिया है। धरती साक्षात् नरक बन चुकी है। संघर्ष के कारणों की खोज और शांति स्थापना की पुकार जोरों पर है पर सब व्यर्थ। "मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की" चारों ओर विवाद ही विवाद अब दिखाई पड़ते हैं।

हम ने इस स्थिति पर जो चिन्तन किया है उससे प्रश्न की गहरायी में बैठ कर यह जाना है कि—

विवाद के यह ऊपरी कारण, कारण के मूल तक नहीं पहुँचने देते। धरती का वास्तविक संघर्ष तो "सत्य" और "असत्य" का है। "विद्या" और "अविद्या" का है। और भी स्पष्ट कहें तो यह संघर्ष "शरीर" और "आत्मा" का है। एक पक्ष शरीर को ही जीवन का सत्य मान चिन्तन करता है। इसी आधार पर अपनी समाज, राज्य, अर्थ, व्यवस्थाएं बनाता है। और शरीर धर्म के आधार पर विधान नियम बनाकर धरती पर अपना साम्राज्य स्थापित करना चाहता है। यह पक्ष जीवन को शरीर रूप में देखता है, विचार करता है। नीति और दर्शन की व्यवस्थाएं भी इसी आधार पर बनाता है।

और दूसरी ओर एक पक्ष 'शरीर' को साधन मात्र मान 'आत्मा' को जान उसी को सत्य समझ अपनी व्यवस्थायें निर्मित करता है। उस के ज्ञान और विज्ञान का लक्ष्य 'आत्मा' है। शरीर भी आत्मा के वाहन रूप में ही है। ऐसा उसका विश्वास है।

मूलतः यह पक्ष अध्यात्म वादी और प्रथम पक्ष भोगवादी कहा जा सकता है। भोगवादी भी अनेक बार अध्यात्मवाद का ढोंग रचकर स्वार्थ साधन में जुटते हैं। इस से अध्यात्म मार्ग भी निन्दा का कारण बनता है। धर्म के नाम को कलंकित करने के उदाहरणों से इतिहास भरा है। जीवन की गहराइयाँ शरीर सुख की कामना से भरी रहती हैं। और शरीर के उपासक धर्म और आत्मा का पवित्र नाम भी अपने लाभ के लिए प्रयोग में लाते हैं। काले-काले कूट कर्मों का आवरण इतना गहरा हो चुका है कि शरीर ही जीवन का धर्म बन गया है।

उलझनें राजनीति की बहुत हैं। राज्य की भूख लुभावनी है। राज्यमार्ग आकर्षक है किन्तु सत्य क्या है ? शरीर की भूख या आत्मा की।

महर्षि दयानन्द की सब से बड़ी देन धरती को यदि कुछ है तो है इस 'आत्मा'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की सत्यता का प्रबल उद्घोष। धर्म और शाँति जिसे भी इष्ट है तो उसे अपने जीवन का आधार-चिन्तन बदलना होगा। सत्य को सत्य जान, उसे पहचानना होगा और राज्य, धन विज्ञान, शरीर सभी को 'आत्मा' का साधन बनाना होगा।

वर्तमान की दौड़ में 'आत्मा' को विस्मृत कर दिया गया है। हम इतने व्यस्त Busy हो चुके हैं कि हमारे पास और सब कार्यों के लिए समय है पर यदि नहीं है तो 'अपने' लिए। हम और सब कुछ जानते हैं यदि नहीं जानते हैं तो अपने को।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि मनुष्य अपने को भुलाकर न धर्म पर चल सकता है न मनुष्य ही रह सकता है। अपने को जानकर कोई पाप नहीं कर सकता। वस्तुतः संसार के सारे दुःखों का मूल कारण है 'आत्म विस्मृति'। अंग्रेज गए पर सुख नहीं मिला। कांग्रेस जाएगी तो भी सुख नहीं मिलेगा। सुख और शाँति का आधार केन्द्र तो "आत्मा" है। जब तक हम इसे नहीं जानेंगे तब तक सुख मिल नहीं सकता।

भूला-भूला फिरता है मन अंधकार में, भटक रहा है खोज सुखों की करने को वह। मिलता है उसको केवल दुःख, उलझन भारी···इस का हल तो वेद की पवित्र ऋचाओं में स्वयं प्रभु ने बताया···हम ने वेद का नाम लिया पर इसे जाना नहीं, दुःख बढ़ता गया, हम भटकते रहे, मंजिल कहाँ, जान कर भी अनजान हैं हम·····

पाठक! क्या समय है आप के पास जीवन की गुत्थी को सुलझाने का, तो देखिए, इस अंक में पृष्ठ ३३ पर स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी की 'उपनिषद-कथा' पढ़ जाइए, ध्यान से, आप को मार्ग मिलेगा, कुछ सोच सकेंगे आप जीवन के सम्बन्ध में।

हम धरती पर क्रांति चाहते हैं, पर हमारी क्रांति राज्य, नाम और भाषा से सम्बन्धित नहीं, हम मनुष्य को यह ज्ञान कराना चाहते हैं कि वह शरीर नहीं 'आत्मा' है। वह अपने को जाने, अपनी सत्ता को पहचाने और प्रभु का पुत्र बन कर, प्रभु की गोदी में झूला झूलकर···आनन्द की गंगा में स्नान करे। धरती से दुःख का साम्राज्य मिटा कर आनन्द का, शाँति का, वैदिक विचार धारा का, साम्राज्य स्थापित करना ही दयानन्द का इष्ट था। प्रभु कृपा करें कि हम आत्म निरीक्षण कर जीवन की गहराइयों में पैठ संघर्ष के मूल आधार को समझें।

बोध रात्रि मार्च में आ रही है, आप इसे मनाएंगे, पर कैसे? क्या आपको 'आत्म-बोध' होगा? क्या आप अपने को समझेंगे? अपने अंतर में झांक उस सत्य के दर्शन करेंगे जो सत्य तिरोहित होकर धरती को नर्क बना रहा है।

मन करता है हर "मन्दिर" में ज्योति जगाऊं।
अंधकार की छाया का अस्तित्व मिटाऊं॥
मनुज हृदय में 'ज्ञान' स्वयं जागेगा जिस दिन।
सतयुग धरती पर साकार आएगा उस दिन॥

भारतीयकरण करो

भारत के प्रत्येक नागरिक का, भाषा का, भूषा का, विचार और संस्कृति का भारतीयकरण करो। भारत और भारतीयता एक साथ रहेंगे। भारतीयता नहीं तो भारत

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नहीं। जो भारतीयकरण के विरोधी हैं वे भारत के द्रोही हैं, दुश्मन हैं। यह तथ्य देश की जनता जितना शीघ्र समझ ले, उतना ही उत्तम है।

पाकिस्तान बना···क्यों ? क्या इसलिए नहीं कि वे भारतीयकरण के विरोधी थे। स्व० नेहरू ने कहा था पाकिस्तान बनते समय, कि हम ने सिर कटा कर सिर दर्द की दवा की है। पर २० वर्षों के बाद सिर में फिर दर्द पैदा हो गया है, और यह प्रश्न फिर उभर रहा है कि क्या हमें फिर सिर कटाना होगा ?

भारत एक देश है, यह भावना मार दी गयी है। देश भक्ति के गीतों को फाँसी मिल चुकी है। पार्टी बाजी, दलबन्दी, प्रांतीयता और साम्प्रदायिकता के विष धर सिर उठाकर फुंकार रहे हैं। वे हाथ जिन्हें इन्हें कुचलना था निर्जीव हो चुके हैं।

प्रश्न है कि राष्ट्र का स्वाभिमान कब तक सोया रहेगा ? राम, कृष्ण, शिवा, प्रताप, दयानन्द, सुभाष, भगतसिंह के अनुयायी कब तक चूड़ियाँ पहन माँ की दुर्दशा देखते रहेंगे। आग लगी है घर आंगन में, कुहराम मचा है हरियाली में, सीमाओं के आसपास विदेशी जाल बिछा रहे हैं षड़यन्त्रों का और शासन निर्जीव, भारत के हितों को कुचल रहा है।

समय आ गया है कि देश भक्त सभी व्यक्ति एक साथ एक झंडे के नीचे इकट्ठे होकर सबल स्वर से भारत के भारतीयकरण की माँग करें। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सब भारत में भारतीय बन कर रहें। विदेशी तत्वों के बल पर देश द्रोह की आग सुलगाने वालों का स्थान भारत में नहीं है यह तथ्य सभी शीघ्र समझें।

"हिन्दो है हम वतन है हिन्दोस्तां हमारा" यह गीत गाइए, भारतीय बन कर भारत मां की सेवा कीजिए·····और कोई मार्ग नहीं।

वे जीतेंगे या हम·····

एक पादरी महोदय, कार्यालय में आए हमारा साहित्य देखा और बहुत कुछ कहा फिर चले गए। दिल्ली की कई ईसाई बस्तियों में जाना होता रहता है, साहित्य भी बांटा है, जिससे वे चिढ़ गए हैं। अभी कल की डाक में एक धमकी भरा पत्र मिला, हम उसे छापना नहीं चाहते, क्योंकि इससे उत्तेजना फैल सकती है। पर एक सवाल आज जरूर दिमाग में उभरा है और उसे आपके सामने रख दिया कि बताइए—

वे जीतेंगे या हम ?

उनका प्रण है कि वे भारत को ईसालैंड बनाएंगे, और हमारा संकल्प हैं कि हम ऐसा स्वप्न देखने वालों को भी वेदामृत पान कराएंगे। उनके पास साधन हैं, शक्ति है, धन है, व्यक्ति हैं। और अनेक राज्य उनकी पीठ पर हैं और हमारे पास है केवल 'सत्य'।

हम 'सत्य' के भरोसे भारत को ईसालैंड बनने से रोकने के लिए लगे हुए हैं। पाठकों को भूला नहीं होगा, पोप के आने पर हमारा अभियान। विश्व व्यापी हलचलें। और गतवर्ष से हमने साधन विहीन होते हुए भी ११ पुस्तकें हजारों की संख्या में छाप दी हैं। कई के कई-कई संस्करण निकल चुके हैं। ईसाई प्रभावित क्षेत्रों में इस साहित्य ने हलचल मचा दी है। किन्तु फिर प्रश्न उभरता है कि इस विशाल मोर्चे पर हम किसके बल पर लड़ें—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लड़ना भी है और विजय भी प्राप्त करनी है। पैर पीछे हटाने वाले हम नहीं। प्राणों की अंतिम श्वास तक संघर्ष जारी रहेगा पर इच्छा केवल इतनी ही है कि आर्य समाज का प्रत्येक सदस्य इस संघर्ष में कूदे। अपने-अपने क्षेत्र में विदेशी पादरियों के नापाक हथकंडों को विफल करने के लिए हम जो कुछ भी कर सकते हों करें। ऋषि दयानन्द के सैनिकों को इस संग्राम में जागकर देश का नेतृत्व करना है। सभी को साथ लेकर राष्ट्रद्रोही तत्वों के विरुद्ध मोर्चा लेना है।

जो चाहते हैं कि विजय हमारी हो वे अब नींद खोलें, जागें और प्रण करें कि हम राम-कृष्ण की धरती पर ईसा के चालाक चेलों के षड्यन्त्र सफल न होने देंगे।

विजय के स्वर गुंजाओ।
आर्यो! कुछ करो! देश बचाओ॥

काशी में आर्य समाज की अपूर्व विजय

१०० वर्ष के बाद भारत की विद्या नगरी काशी में आर्य समाज के वीरों ने एक बार पुनः विजय पताका फहरा कर सिद्ध कर दिया कि सत्य सदा जयी होता है। देव दयानन्द ने अकेले और साधन शून्य होने पर भी विद्या और सत्य के बल पर काशी के पंडितों को एक बार सोचने के लिए विवश कर दिया था कि वे भ्रांत पथ के पथिक बने हुए हैं।

हर्ष का विषय है ऋषि दयानन्द के अनुयायियों ने उसी काशी में एक बार फिर पाखंड-खंडिनी-पताका लहरा कर सभी को यह निमंत्रण दिया कि **"देश और धर्म का हित इष्ट है तो मूर्तिपूजा और अंध-विश्वास छोड़ो।"** आर्य समाज का यह निमंत्रण वस्तुतः युग की माँग है। आर्य धर्म अनुयायियों का पतन, भारत राष्ट्र की सब भाँति दुर्गति का मूल कारण मूर्ति पूजा और अंध विश्वास ही हैं।

समय की माँग के अनुरूप एक बार फिर पाखंडों के दुर्गम गढ़ पर प्रहार कर काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह के आयोजकों ने विषधर के फन पर चोट की है। हमारी सम्मति में आज अगर हमें आगे बढ़ना है और ईसाइयत व इस्लाम, कम्यूनिज्म के चक्र से बचना है तो उपाय है केवल ऋषि दयानन्द का मार्ग। बिना दयानन्द के मार्ग पर चले न "गो-रक्षा" हो सकती है नराष्ट्र रक्षा। यह तथ्य पौराणिकों के नेता जितना शीघ्र समझ लें, उतना ही कल्याण है। आर्य समाज के विद्वानों ने काशी में अपने भाषणों और प्रवचनों द्वारा विद्वन्मंडल पर अपना जो प्रभाव स्थापित किया है वह अभिनन्दनीय है। उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान विद्वदवर्य श्री पं० शिवकुमार जी शास्त्री के सफल नेतृत्व और संयोजकत्व में आयोजन सफल हुआ, आर्य समाज का मस्तक गौरव से उन्नत हुआ, पाखंड-गढ़ काँपे और एक बार सर्वत्र नव जीवन संचार हुआ···इस सबके लिए आयोजक धन्यवाद के पात्र हैं।

शंकराचार्य की गद्दी पर आसीन चारों व्यक्ति, स्वामी करपात्री जी और उनके अनुयायी अब यह भली भाँति समझ लें कि वे अधिक दिन धर्म के नाम पर जनता को बहका नहीं सकते। वेद का वही रूप, जो महर्षि दयानन्द ने बताया है, वैदिक धर्म और संस्कृति की रक्षा कर सकता है। सायण, महीधर, उव्वट और अन्य भाष्यकारों ने जो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थ के अनर्थ किए हैं उनके रहते तो कुछ भी न बचेगा। अभी समय शेष है, आर्य समाज के मार्ग पर चलकर, आइए सर्वत्र वेद और 'ओ३म्' की पावन पताका फहराने में हम और आप जुट जाएं। धर्म की रक्षा का मार्ग काशी में शास्त्रार्थों की चुनौती से प्रशस्त हुआ, 'सत्य' की विजय का डंका एक बार फिर बजा, पाप अज्ञान की पराजय होनी ही थी, हुयी और आर्य समाज यशस्वी, विजयी, गौरवान्वित हुआ·····।

प्रभु कृपा करें कि दयानन्द के सारे सैनिक पूरे बल से पाखंड खंडिनि पताका उठाएं। मर भले ही जाएं पर झुकें नहीं, काशी शास्त्रार्थ शताब्दी का यही संदेश है।

साहित्य की उपेक्षा

आर्य समाजों के अधिकारी साहित्य को उपेक्षा की वस्तु मानते हैं। एक भाषण पर ३००) तक व्यय करने वाला आर्य समाज साहित्य प्रचार पर एक भी पैसा व्यय करना अपराध मानता है। यह नीति और मनोवृत्ति वस्तुतः हमारी प्रगति में भारी बाधा है।

हमारे पास विनय प्रार्थना के अतिरिक्त और कोई शक्ति नहीं, और प्रार्थना की भाषा आर्य समाज के अधिकारी के कान में सुनायी नहीं पड़ती। उपाय क्या हो, समझ आता नहीं, फिर भी यदि कोई सोचे गंभीरता से तो वह हमारे इस पक्ष से इन्कार न कर सकेगा कि साहित्य प्रचार का प्रबल साधन है।

हम चाहेंगे कि आगामी शिवरात्रि पर प्रत्येक आर्य एक दिन भूखा रहे और जो धन बचे उसका साहित्य बाँटे। प्रत्येक आर्य समाज अपनी शक्ति भर शिवरात्रि के दिन साहित्य बाँटें। ईश्वर कैसा है? और मूर्ति पूजा की हानियाँ, विषय पर जो भी ग्रन्थ उपलब्ध हों व भारी संख्या में बाँटे जाएं। मन चाहता है कि सारे देश में शिवरात्रि के दिन आर्य समाज का संदेश प्रकाश फैलादे···पर यह चाह तो तभी पूरी होगी जबकि आप सब भी यही चाहने लग जाएं।

पागलों के सपने

स्वप्न देखना पागलपन है, और हम आजकल ऐसे सपनों में विचर रहे हैं। इच्छा होती है कि धरती के प्रत्येक मस्तिष्क तक 'वेद' प्रकाश पहुँचाएं। कभी मन करता है कि भारत केराष्ट्र द्रोही तत्व मिटायें साधन के नाम पर शून्य, फिर भी काम जारी है और पागलपन का दौरा बढ़ता जा रहा हैं।

सोचा था कि शिवरात्रि से साप्ताहिक निकालें ताकि हर सप्ताह अपनी बात फैला सकें। पर अभी इच्छा पूरी नहीं हुयी। मासिक में भी जनवरी से आवरण आफसेट का कर दिया तो व्यय बढ़ गया। १ वर्ष १० मास में एक लाख से ऊपर का साहित्य वितरित हो चुका है। काम बढ़ रहा है, साधन भी प्रभु दे रहा है, हम तो साधन विहीन अपने प्रभु पर ही विश्वास रख अपनी कल्पनाएं साकार करने में लगे हैं।

हम महर्षि दयानन्द के महान् संदेश को जन-जन के अंतर में प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। इसीलिए आज प्रैसमें एक अनमोल पुस्तक Teachings of Swami Dayanand दे दी है। इच्छा है कि देश विदेश के अंग्रेजी पढ़े लिखे व्यक्तियों तक यह पहुंचे। पर पहुँचाने वालों से प्रार्थना ही की जा सकती है। भवन बनाने के लिए हजारों रुपए खर्च

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करने वाले साहित्य को बेकार की वस्तु समझते हैं। यह समझ जब बदलेगी तो हमारे भी सपने जो आज पागलों के से लगते हैं साकार होंगे।

कर्म करते हुए बढ़ना हमने सीखा है, कभी प्रभु भक्तों के अन्तर में हमारी पुकार पहुंचेगी और इन्हें हमारी साधना पर विश्वास होगा तो वे धन बरसाएँगे और तब देव दयानन्द की विचारधारा का साम्राज्य धरती पर स्थापित करने का हमारा स्वप्न पूरा होगा। हम करें या हमारे बाद कोई और·····पर होगा अवश्य और एक दिन धरत ईसा, मार्क्स, मोहम्मद आदि को छोड़ ईश्वर की शरण में आएगी।

काश, कि अपने जीवन में हम अपने सपने साकार देख सकते ?

दंगे और देश

विश्वास था कि पाकिस्तान बनने के बाद भारत में दंगों की परंपरा समाप्त हो जाएगी किन्तु यह विश्वास अब धराशायी हो चुका है। शासन की अदूरदर्शिता ने ऐसा रंग जमाया है कि सांप्रदायिकता का दानव फिर कहीं न कहीं अपनी विनाश लीला प्रकट कर ही देता है। सांप्रदायिकता के अनेक रूप भी अब जन्म ले चुके हैं और इनकी कृपा से देश के जान-माल को हानि पहुंचनी प्रतिदिन की घटना बन गयी है।

शासन का पहला और प्रमुख कार्य है शांति व्यवस्था स्थापित करना, और इस दिशा में सफलता असफलता का लेखा-जोखा प्रतिदिन के समाचार पत्रों में सप्रमाण प्रस्तुत रहता ही है। इस सब का कारण वह नीति है जो अपराधी को निर्दोष और निर्दोष को अपराधी बनाती है।

आपसी संघर्ष और इस जहरीले प्रवाह को रोकने के लिए आवश्यकता है सुदृढ़ नीति की। जब तक भारत का प्रत्येक नागरिक पूरे भारत को अपना देश नहीं मानेगा, जब तक प्रांत और मजहब की सीमाएँ जड़ से नष्ट नहीं होंगी तब तक दंगे देश पर काले कलंक की भांति राष्ट्र भक्तों को चुनौती देते रहेंगे।

देश को बचाना है तो राष्ट्र की एकता के दिव्य स्वप्न भारत मां की पावन आराधना के साथ देखने होंगे अन्यथा कुछ भी न बचेगा।

अनुशासन ही जीवन है

अनुशासन किसी भी संगठन का प्राण है। इसकी रक्षा ही संगठन की रक्षा है। आज आर्यसमाज का संगटन यदि पूर्ण अनुशासन बद्ध होकर कार्य करे तो वह राष्ट्र का सबसे अधिक शक्तिशाली संगठन है। अनुशासन सबसे ऊपर सिद्धांतों का होना चाहिए। सिद्धान्त की रक्षा सर्वोपरि है। पश्चात विधान की रक्षा पूर्ण श्रद्धा से होनी चाहिए।

सर्वोच्च संगठन सार्वदेशिक सभा को सब भांति शक्तिशाली बनाना प्रत्येक आर्य का परम धर्म है। यह संगठन आर्य समाज का गौरव है। इस सभा के अधीनस्थ सभी संगठनों से यह सभा प्रेमपूर्ण व्यवहार करे। आर्य समाज के उदात्त हितों को दृष्टि में रख कर सभी संगठन को बल दें और संगठन सभी की रक्षा करे।

प्रांतीय सभाएं सुदृढ़ हों, स्थानीय आर्य समाजें उन का सहयोग करें। स्थानीयआर्य आर्यसमाजों के अधिकारियों का आदेश पालें, और सहयोग दें। आज तक जो कुछ भी हुआ उसे सभी भूलें और परस्पर दोष खोजने के स्थान पर सभी ऐसा मार्ग खोजें कि प्रेम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और एकता बढ़े। हम सब का लक्ष्य है 'वेद-प्रचार'। संपूर्ण संगठन और ढांचा महर्षि के महान लक्ष्य की पूर्ति के लिए खड़ा है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि आर्य समाज के कर्णधार 'प्रेम-एकता' अनुशासन से काम लें। बड़ों का छोटे मान करें। बड़े छोटों से प्यार करें। हम दूसरों के गुण देखें, दोष नहीं। दोष हों भी तो उन्हें सुधारने का यत्न होना चाहिए—उछालने का नहीं।

आज हमें जीवित रहना है तो राह बदलनी होगी। हर आर्य को यज्ञ वेदी पर बैठकर फूट को जला प्रेम मंत्र का पाठ करना ही होगा—अन्यथा कुछ भी तो न बचेगा। अब एक साथ कदम से कदम मिलाकर, 'ओ३म्' पताका संभाल विजय अभियान के लिए कूच करने का समय आ गया है। प्यार से, एक बनो, उठो दयानन्द के गीत गाकर आर्य समाज को विश्व विजय के लिए तैयार करो। समय की यही मांग है।

टंकारा ..... सफल हो

गुजरात प्रांत में टंकारा ग्राम को महर्षि दयानन्द का जन्म स्थान होने का सौभाग्य प्राप्त है। स्व० श्री नान जी भाई के प्रयत्नों से यहां एक विशाल दयानन्द स्मारक खड़ा किया गया। जनता ने भी उदारता से दान दिया, पर दुर्भाग्य कि यहां जो होना चाहिए वह न हो सका।

आजकल इस स्मारक ट्रस्ट के कार्यकर्ता प्रधान श्री ला० दीवान चन्द जी अपने पूर्ण सामर्थ्य से इस स्मारक को उपयोगी—स्वावलंबी बनाने में लगे हैं। प्रभु उन्हें सफलता दे। हमारी सम्मति में टंकारा में, ट्रस्ट के अधिकारियों को एक विशाल साहित्य प्रकाशन केन्द्र आरंभ करना चाहिए। धन की कमी न थी, न है। बैंकों में जमा पूंजी करने की प्रवृत्ति और ईश्वर पर अविश्वास के कारण ही हम सफल नहीं हो पाते।

यदि ट्रस्ट के अधिकारी उत्साह से टंकारा को ऋषि दयानन्द की ज्योति का प्रसार केन्द्र बनाना चाहेंगे तो वह दिन दूर नहीं कि टंकारा धरती को ज्ञान और सच्चा मार्ग दर्शन दे सकेगा। हमारी शुभ कामनाएं सदैव अर्पित हैं।

आर्य समाज अजेय है

आर्य समाज के कुछ विरोधी असत्य का सहारा लेकर आज यह प्रचार कर रहे हैं कि काशी में आर्य समाज हार गया। यह प्रचार आधार हीन और अत्यन्त भ्रामक है।

आर्य समाज का साधारण से साधारण विद्वान विपक्षियों के धुरन्धर विद्वानों के दांत खट्टे करने की सामर्थ्य रखता है—यह इसलिए कि सत्य आर्य समाज के साथ है। आर्य समाज ने कभी भी असत्य का पक्ष नहीं लिया। भ्रम और अंधविश्वासों का वह कट्टर विरोधी है, इसलिए वह अजेय है।

आर्य समाज को विचार विमर्श और शास्त्रार्थ में हराने वाला न कोई पैदा हुआ है न होगा। अजेय-अटल विश्व विजयी आर्य समाज उन ईश्वरीय सिद्धान्तों को मानता है है जिन पर चलकर धरती के मनुष्य वसुन्धरा को स्वर्ग बना सकते हैं। आर्यसमाज की हार का प्रचार करने वाले वस्तुतः स्वयं हारे हुए हैं। कोई भ्रम में न पड़े—काशी में आर्य समाज की अपूर्व विजय हुई है।

—भारतेन्द्रनाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कल्पना आदर्श

—दीनानाथ सिद्धान्तालंकार

और मैं-.....

प्रधान मन्त्री बन गया

एक आर्य विद्वान यदि भारत का प्रधानमन्त्री बन जाए तो, यह कल्पना अभी कल्पना ही है। किन्तु कल्पना ही प्रयत्नों से वास्तविक रूप धारण करती है। पिछले लेख में प्रसिद्ध पत्रकार पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार ने आप के साथ प्रधानमन्त्री बनने का स्वप्न देखा था और अब वे प्रधान मन्त्री बन कर कुछ घोषणाएँ कर रहें हैं। आप उन्हें पढ़िए, अगले अंकों में उनके प्रधानमन्त्री काल का पूरा विवरण भी हम प्रस्तुत करेंगे। —सं०

जन-ज्ञान के पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि पिछले महीनों की मेरी अगर सफल हो गयी और मैं प्रधान मन्त्री बन ही गया अथवा यूँ कहिए कि बना दिया गया। कैसे यह ऊँचा ओहदा मुझे नसीब हो गया, इसकी कहानी भी दिलचस्प है। 'जन-ज्ञान' के पाठकों की सेवा में यह विवरण प्रस्तुत है।

मैं सर्व सम्मति से प्रधान मन्त्री बना

जिस समय मेरा घोषणा पत्र जनता ने पढ़ा, तब एक जोरदार हलचल पैदा हो गयी, खासतौर पर नौजवानों में। जेबों में अर्जियाँ, प्रमाणपत्र और मन्त्रियों की सिफारशी चिट्ठियाँ लिए पढ़े और 'काम दिलाऊ केन्द्रों' पर धक्के खाते, बेरोजगार पढ़े लिखे नौजवानों को जब यह पता लगा कि देश का प्रधान मन्त्री एक ऐसा व्यक्ति बनना चाहता है जिसने ४० वर्ष से ऊपर की उम्र वालों को बूढ़ों के खाते में डाल कर और सरकारी नौकरी से रिटायर कर २५ से ४० वर्ष तक के नौजवानों की भरती करने का एक इनकिलाबी कदम उठाया है, तब वे घर-घर जाकर मेरा प्रचार करने लगे। संसद् सदस्यों को चुनाव करने के लिए अपनी बैठक करनी पड़ी। "युवकों" ने मेरे पक्ष में जोरदार कनवैंसिंग किया। बूढ़े संसद् सदस्यों ने कुछ न-नु-न-च की पर इस तूफानी प्रोपेगण्डों के आगे भला किसके

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राजधानी के प्रसिद्ध पत्रकार आर्य समाज के यशस्वी विद्वान और गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार आर्य राष्ट्र के प्रधान मंत्री बन कर कुछ घोषणाएँ कर रहे हैं। पढ़िए और आगामी अंकों में उनके प्रधान मन्त्री काल का रोचक वर्णन पढ़ने की प्रतीक्षा कीजिए।

—सम्पादक

मेरा शानदार जलूस

पाँव टिक सकते थे ? सार यह है कि मैं सर्वसम्मति से प्रधानमन्त्री चुन लिया गया।

अब मेरी तलाश शुरू हुई। "जन-ज्ञान" के सम्पादक महोदय के पास फोनों का ताँता लग गया। कई तो अपनी मोटरों पर उनके घर आ धमके। अब मैं भला कब तक लापता रह सकता था ?

मेरे तीर ठीक निशाने पर

मेरे घर यह हल्ला पार्टी पहुँची। मुझे खुशी तो बेहद हुई। देश का प्रधान मन्त्री बन जाने पर, वह भी सर्व सम्मति से, किस माई के लाल को खुशी नहीं होगी। सच पूछो तो, मैं इसकी उम्मीद "जन-ज्ञान" में अपनी घोषणा 'अगर मैं प्रधान मन्त्री बन जाऊँ तो···' के प्रकाशित होने के बाद से ही कर रहा था। आप शायद कहेंगे कि एक रुपये का लाटरी टिकट खरीदने वाला तक आदमी जैसे यह समझता है कि पहला इनाम निःसन्देह उसके भाग्य में ही है, वैसे ही आपकी भी प्रधान मन्त्री बनने की इच्छा शेख चिल्ली की उड़ान की तरह ही थी। पर मित्रवर ! आप बुनियादी भूल में हैं। मैंने अपनी उस घोषणा में कुछ ऐसे तीर छोड़े थे जो ठीक निशाने पर बिना लगे रह ही नहीं सकते थे।

पर अब पुराने मुर्दों को खोदने से क्या लाभ ? आप कुछ भी समझें, मैं प्रधान मन्त्री तो चुन ही लिया गया हूँ।

मैं आपको वह लम्बी कहानी नहीं सुनाना चाहता हूँ कि किस प्रकार मुझे कन्धों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर उठा, नोट भरे फूलों के हारों और पुष्प-वर्षा से लाद, राजधानी के साज-सजावट भरे बाजारों में से विशाल जलूस के रूप में घुमाया गया, किस प्रकार जगह-जगह, अभिनन्दन पत्र भेंट किये गये और किस प्रकार मेरे इन्कलाबी प्रोग्रामों को सुन जनता ने उच्च स्वर के साथ हर्ष ध्वनि की।

जब मुझे संसद् भवन के मंच पर लाया गया

आखिर, संसद् सदस्यों की बैठक में मुझे उपस्थित किया गया। विश्व के प्रमुख देशों के समस्त राजदूतों और प्रतिनिधियों के अतिरिक्त, समूचे देश के विशिष्ट आमन्त्रित सज्जन भी वहाँ मौजूद थे। आधुनिक साज-सज्जा से आभूषित महिलाओं की पर्याप्त संख्या से समारोह में एक अनुपेक्षणीय आकर्षण आ गया था, विशेषत: "माडर्न पोस्ट" युवतियों की अर्ध-नग्न वेषभूषा, चंचल स्वभाव, बार-बार कृत्रिम स्मित हास्य और लगातार चल रही काना-फूसी से। मेरे मंच पर खड़े होने के बाद ही, तत्काल, भवन में नि:स्पन्दता और नि:शब्दता व्याप्त हो गयी। प्रत्येक के नेत्र और कान कुछ कौतूहल पर अधिकत:, उत्सुकता के साथ मुझ पर ही केन्द्रित थे। देश-विदेश के फोटोग्राफरों, फिल्म रीलों और टेलीविजन आपरेटरों की फौज अलग अपनी मशीनों को मुस्तैदी से अपनी बगल में दबाये, मुझे 'शाट' करने को उतावली हो रही थी। जानते हो क्यों ? प्रधानमन्त्री बनने के पश्चात आज मुझे पहली बार अपनी 'नीति घोषणा' करनी थी।

'मेरे क्लाइमेक्स' का वह क्षण भी आ गया। मैं सरकारी सुरक्षा अधिकारियों द्वारा मंच पर लाया गया। हर्ष ध्वनि और करतल ध्वनि के प्रबल घोष के मध्य मैंने अपना भाषण प्रारम्भ किया। क्षण में औपचारिकता के नियमों के अनुसार प्रधान मन्त्री बनने के लिए धन्यवाद आदि देने के बाद मैंने अपनी नीति घोषणा करते हुए कहा—

मेरी आर्य राज्य नीति की घोषणा

आप लोगों को यह पता होना चाहिए कि मैं आर्य हूँ और आर्य समाज का सक्रिय सदस्य हूँ। आर्य समाज वेद को ही ईश्वरीय ज्ञान मानता है और उसी के अनुसार समस्त भूमण्डल में "वैदिक साम्राज्य" स्थापित करना चाहता है। चूँकि हम सब भारतीय हैं, इस भारतवर्ष के ही निवासी हैं, इसलिए सबसे पहले हमें भारत में ही "वैदिक राज्य" या आर्य राज्य के आदर्श को साकार रूप देना होगा।

एक देश, एक झण्डा, एक राष्ट्र, एक भाषा

भारत में विविध सम्प्रदाय और मत-मतान्तर प्रचलित हैं। मेरी नीति के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने-अपने विचार के अनुसार पूजा-पाठ और व्यक्तिगत जीवन-यापन की स्वतन्त्रता है पर सामूहिक और सार्वजनिक दृष्टि से हमें यह मानना होगा कि हमारा एक ही देश है, एक ही राष्ट्रीय झण्डा है, एक ही राष्ट्रीय गीत है और एक ही राष्ट्रभाषा है जो हिन्दी है। हमें यह भी मानना पड़ेगा कि हम सब की राष्ट्रीय परम्पराएँ एक हैं, राष्ट्रीय आदर्श एक हैं और राष्ट्रीयता इतिहास एक हैं। इस देश में पैदा हुए प्रत्येक व्यक्ति को यह मानना होगा कि हमारे पूर्वज एक समान हैं, प्रत्येक के माननीय और अनुकरणीय हैं और हम सब की धमनियों में उन्हीं का रक्त बह रहा है। भारत में रहते हुए और यहीं के अन्न-जल, वायु से अपने को पुष्ट करते हुए तथा अपनी जीवन लीला को भारत की इस पवित्र भूमि में ही समाप्त करते हुए किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं होगा कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह भारत से बाहर किसी अन्य देश के प्रति निष्ठा रखे। कोई राजनीतिक दल किसी विदेश के प्रति वफादार नहीं होगा, उससे साधन प्राप्त नहीं कर सकेगा और हिंसा के मार्ग का अवलम्बन नहीं करेगा।

उच्चतम वेतन तीन हजार रुपये मासिक

इस आर्य राज्य में जिसे राम-राज्य भी मैं कह सकता हूँ, मेरी सरकार का यह कर्त्तव्य होगा कि प्रत्येक नागरिक की न्यूनतम पांच बुनियादी आवश्यकताएँ, अर्थात् भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा और औषधि सुलभ हों। ऐसी व्यवस्था की जाएगी जिससे निर्धनता का अन्त हो और सम्पत्ति का संचय कुछ इने-गिने व्यक्तियों के हाथ में न हो सके। किसी सरकारी कर्मचारी का वेतन दो हजार रुपये मासिक से अधिक नहीं होगा। किसी मन्त्री का वेतन बिजली, पानी, मकान भाड़ा मिला कर अढ़ाई हजार रुपये मासिक से अधिक नहीं होगा। किसी सरकारी कर्मचारी व मन्त्री को किसी प्रकार का भत्ता नहीं दिया जाएगा। अगर वे सरकारी काम से यात्रा पर जाएंगे तो उन्हें बिना किसी अतिरिक्त भत्ते के वास्तविक भाड़ा ही मिलेगा। प्रधान मन्त्री का वेतन तीन हजार रुपये मासिक तक होगा और अन्य मन्त्रियों जैसे ही नियम उस पर भी लागू होंगे। वर्तमान राष्ट्रपति भवन राजकीय अस्पताल में परिवर्तित कर दिया जाएगा। राष्ट्रपति सहित, प्रधान मन्त्री अन्य मन्त्रिगण और उच्च सरकारी कर्मचारी सब सामान्य मकानों में रहेंगे। रेलगाड़ी में केवल एक तीसरा दर्जा ही होगा। कोठियों में पब्लिक स्कूल, क्लब, शराब घर, नाच रंग घर सब बन्द कर दिये जाएंगे। सिनेमा घरों में अश्लील, नग्न चित्रों का दिखाना बन्द कर दिया जाएगा। मद्यपान पर पूर्ण प्रतिबन्ध होगा। प्रारम्भिक शिक्षा बाध्य और उच्च कक्षा तक सर्वथा मुफ्त होगी। प्रत्येक नागरिक के लिए सैनिक शिक्षा अनिवार्य होने के साथ-साथ उसे दो वर्ष तक सेना में काम करना भी आवश्यक होगा।

प्रत्येक सामूहिक जीवन का प्रारम्भ वेद मन्त्रों से

प्रत्येक नागरिक की, जिसमें नारी भी शामिल है। वेशभूषा, सादा, स्वदेशी और बिना तड़क-भड़क की होगी। नारी की अर्धनग्नता और उसके उत्तेजक व्यवहार पर पूर्ण प्रतिबन्ध होगा। शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाएँ होंगी, हिन्दी राष्ट्रभाषा के और संस्कृत राष्ट्रीय सम्पति के रूप में अनिवार्य और अंग्रेजी, जर्मन, एशियन, फ्रेंच इनमें से कोई भाषा ऐच्छिक रूप में होगी। प्रत्येक शिक्षणालय का प्रारम्भ गायत्री और वेद मन्त्रों द्वारा प्रार्थना और राष्ट्रीय गान के और सप्ताह में एक दिन यज्ञ के साथ होगा। सरकारी व गैर सरकारी कार्यालय, प्रतिष्ठान, संस्थाएँ, उद्योग इत्यादि जहाँ भी सम्मिलित रूप से कार्य होते हैं, प्रत्येक का प्रारम्भ इसी प्रकार गायत्री और वेद मन्त्रों द्वारा प्रार्थना तथा राष्ट्रीय गान के साथ करना होगा। सरकारी व गैर सरकारी, समस्त कार्यालयों, बैंकों, बीमा कम्पनियों, व्यापारगृहों इत्यादि का समूचा कारोबार हिन्दी में होगा। विदेशों के साथ भी पत्र-व्यवहार हिन्दी में होगा।

विदेशी मिशनरियों का निष्कासन, धर्म परिवर्तन पर रोक

देश में गोवध तथा अन्य दुधारू पशुओं की हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध होगा। देश में से समस्त विदेशी मिशनरी निकाल दिये जाएँगे। मजिस्ट्रेट को बिना पूर्व सूचना दिये अथवा बलात् किसी का कोई धर्म परिवर्तन नहीं कर सकेगा। पूँजी और जायदाद की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उच्चतम सीमा निर्धारित की जाएगी। कोई विदेशी भारत में जमीन नहीं खरीद सकेगा और न ही जायदाद बेच सकेगा। विदेशी पूँजी का राष्ट्रीयकरण और विदेशी बैंकों, कारखानों और कम्पनियों का भारतीयकरण किया जाएगा। आर्थिक क्षेत्र में सार्वजनिक और निजी दोनों प्रकार के उद्योग और व्यवसाय चलेंगे। पर दोनों क्षेत्रों में श्रमिकों के सर्वतोमुखी कल्याण पर विशेष ध्यान दिया जाएगा और जैसा कि पहले कह चुका हूँ कि किसी का वेतन दो हजार रुपये से अधिक नहीं होगा। किसी प्रकार का डिविडैंड, मुनाफा और बोनस प्रशासकों को नहीं मिलेगा। उद्योगों की संचालन व्यवस्था में श्रमिकों का विशेष प्रनिनिधित्व रहेगा।

विधान सभा, संसद् और राष्ट्रपति पद के लिए प्रतिबन्ध

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत विश्व के किसी गुट में शामिल नहीं होगा। आन्तरिक राजनीति में भारत का प्रत्येक नागरिक एक समान होगा, जाति-पांति, प्रदेश इत्यादि के कारण कोई भेद नहीं होगा और प्रत्येक के लिए उन्नति के द्वार समान रूप से खुले होंगे। बालिग मताधिकार पर आधारित लोकतन्त्र प्रशासन भारत में गत दो दशकों में असफल रहा है। इसलिए कम से कम मिडिल पास बयस्क को ही मताधिकार हो, विधान सभा की सदस्यता के कम से कम मैट्रिक और आयु तीस वर्ष तक संसद् सदस्यता के लिए कम से कम ग्रेजुएट और आयु तीस वर्ष तक। राष्ट्रपति पद के लिए कम से कम पोस्ट ग्रेजुएट और आयु चालीस वर्ष तक। इस प्रकार का कानून बनाया जाएगा। विधान परिषदें समाप्त कर दी जाएंगी। भूत पूर्व राजाओं महाराजाओं के निजी वेतन और विशेषाधिकारों का और किसी भी प्रकार की जमीदारी प्रथा का अन्त कर दिया जाएगा, और जो किसान स्वयं हल चलाता है, उसे ही भूमि का स्वामित्व मिलेगा। साथ ही खेती की भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित की जाएगी। भ्रष्टाचारी और देशद्रोही नागरिक को फांसी की सजा दी जाएगी।

सब के लिए एक समान नागरिक कानून

सामाजिक क्षेत्र में कोई नागरिक स्पृश्य-अस्पृश्य नहीं माना जाएगा, पिछड़े वर्गों और हरिजनों के उचित विकास पर अधिक ध्यान दिया जाएगा, पर उनके तथा ऐंग्लो इण्डियनों के लिए विधान सभाओं और संसद् में जो सीटें सुरक्षित हैं व उनके पृथक् निर्वाचन क्षेत्र हैं, वे सब समाप्त कर दिये जाएंगे। तलाक प्रथा और बहु-विवाह, व्यभिचार, वेश्यावृत्ति का अन्त, स्त्री-पुरुष के समान अधिकार, देश के सब सम्प्रदायों और वर्गों के लिए एक सदृश पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, उत्तराधिकार सम्बन्धी तथा अन्य नागरिक नियम होंगे।

जब मैंने आर्डिनेन्स जारी कर दिये

अपनी नीति घोषणा को समाप्त करते हुए मैंने अन्त में उच्च स्वर से कहा कि ये सब अध्यादेश (आर्डीनेन्स) के रूप में कल से जारी हो जाएंगे। इस पर सारा भवन करतल ध्वनि से गूँज उठा। विभिन्न राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों ने एक स्वर से मेरी नीति घोषणा और सब अध्यादेशों का हार्दिक स्वागत करते हुए पूर्ण सक्रिय सहयोग का विश्वास दिलाया। एक प्रमुख राजनीतिक दल के नेता ने तो यहाँ तक कहा कि—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऐसा प्रधान मन्त्री आज तक नहीं हुआ

"इस देश को आज तक आप सदृश प्रधान मन्त्री नहीं मिला। आपके अध्यादेश सचमुच बड़े क्रान्तिकारी और दूरगामी हैं। हम सब आपके पीछे हैं और सच्चाई से आपका अनुगमन करेंगे।"

बोलो, आर्य राज्य की जय !!!

भारी संख्या में उत्सवों, पर्वों और विशेष अवसरों पर बाँटिए

१. आर्य समाज क्या मानता है ?—पंडित मदनमोहन विद्यासागर लिखित।
२. आर्य समाज की मान्यताएँ—स्व० पं रामचन्द्र जी देहलवी की भेंट।
३. मूर्ति पूजा की हानियाँ — महर्षि दयानन्द की प्रभावपूर्ण लेखनी से
४. विश्व को वेद का संदेश — भारतेन्द्रनाथ साहित्यालंकार लिखित
५. महर्षि दयानन्द की विशेषताएँ—स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी लिखित

इन सभी आकर्षक आवरण, बढ़िया कागज वाले ट्रैक्टों का मूल्य है केवल १०) सैकड़ा)

६. वैदिक भक्तिवाद —पं० जगत् कुमार शास्त्री लिखित १५) सैकड़ा
७. सामवेद—अंग्रेजी भाष्य—पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड कृत—मूल्य १५)

किन्तु जन-ज्ञान के सदस्यों को केवल १०) में

घर-घर में दयानन्द का संदेश गुंजाने के लिए प्रभावशाली रूप में साहित्य का प्रयोग कीजिए।

१—अपना आदेश भेजते हुए रेलवे स्टेशन का नाम लिखें।
२—चौथाई धन अगाऊ भेजें।

जन-ज्ञान-प्रकाशन १५९७ हरध्यानसिंह रोड नई दिल्ली-५

आवश्यक सूचना

प्रभावशाली एवं पूर्ण विधि के अनुसार वैदिक 'विवाह संस्कार', 'मुण्डन संस्कार' अथवा 'नामकरण संस्कार' आदि विविध संस्कारों के लिए विशेष विद्वान् एवं सटीक व्याख्याता, कर्मकाण्ड-मर्मज्ञ श्री पं० अभिविनय भारथी विद्यावाचस्पति की सेवाएँ उपलब्ध की जा सकती हैं।

दिल्ली में बाहर से आने वाले बारातियों के लिए सूचित करने पर विवाह मण्डप, वेदी तथा समस्त आवश्यक सामग्री सहित पूर्ण व्यवस्था भी जा सकती है।

पं० अभिविनय भारथी
पता :—एक्स-१०, वेस्ट पटेल नगर मार्केट
नई दिल्ली-८

फोन : ५८३३४३

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वर्गीय श्री चिरंजीतराय साहनी

ॐ

उत्तिष्ठत संनह्यध्वं उदाराः केतुभिः सह

हे वीर पुरुषो उठो, तैयार हो जाओ। ओ३म् ध्वज के साथ वेद-ज्ञान ज्योति से समस्त विश्व को ज्योतित कर दो। मानो उनके इस पवित्र उद्बोधक नारों से आज भी आकाश गूंज रहा है। आर्य समाज को विकसित करने वाले दिव्य पुरुषों में उनका भी एक अद्भुत स्थान है।

श्री चिरंजीत रायजी साहनी का जन्म ८ फरवरी सन् १९०१ ई० को रावलपिण्डी में हुआ था। भेरा (पश्चिमी पंजाब) निवास श्री दीवान शिवराम जी साहनी के सुपुत्र थे। बाल्यकाल में ही श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी सरस्वती के सम्पर्क में आकर आर्योचित मार्ग पर चलना प्रारम्भ कर दिया। पुनः स्व० श्री आत्मानन्दजी सरस्वती का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। डी० ए० वी० स्कूल रावल पिण्डी में मैट्रिक पास करके मेडिकल कालेज लाहौर में प्रवेशार्थ गये। परन्तु सत्यं एवं स्वाभिमानता के कारण प्रवेश न पा सके। सन् १९१७ में स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्दजी सरस्वती के सम्पर्क में आये, पुनः आर्य समाज के प्रति अगाध-श्रद्धा, निष्ठा, एवं विश्वास का भाव और बढ़ गया। साहनी जी के अन्दर नेतृत्व की शक्ति जीवन के प्रारम्भ से ही थी। मार्डन कालेज रावलपिण्डी में अध्ययन काल में छात्र संघ के मंत्री बन गये थे कालानन्तर में व्यापार में भी आप की अधिक रुचि हो गई। १९१८ ई० में ही साहनी मेटल मार्ट के नाम से लोहा सीमेंट की एक दुकान सदर बाजार रावल पिण्डी में कर ली। इस कार्य में इन्हें आशातीत सफलता मिली।

वैदिक धर्म के प्रति रुचि, कर्तव्य परायणता, जन सेवा, देशभक्ति इत्यादि विशेष गुणों के कारण कुछ ही समय में रावल पिण्डी में विख्यात हो गये। १५ फरवरी १९२५ को आचार्य पं० मुक्तिराम जी (श्री स्वामी आत्मानन्द जी) ने इनका शुभ पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न कराया। विवाहोपरान्त अपनी सुयोग्या धर्म पत्नी के साथ पारिवारिक उन्नति के साथ-साथ आर्य समाज की उन्नति के लिये चौगुनी शक्ति से कार्य प्रारम्भ कर दिया। कई शिक्षण संस्थायें इनके सहयोग से आगे बढ़ने लगीं। जैसे लालीवाई आर्य कन्या विद्यालय रावल पिन्डी एवं गुरुकुल रावल।

१९३९ में हैदराबाद का सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ। तन-मन-धन से सत्याग्रह को सफल बनाने में जुट गये। इन्होंने शुद्धि आन्दोलन को भी प्रगति दी। मैं उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में उपदेशक था। सभा की ओर से आर्य समाज सदर रावलपिण्डी में पुरोहित बन कर गया था, तब साहनी जी उप प्रधान थे। मैंने इनके समक्ष हरिजनों में प्रचार करने का कार्यक्रम उपस्थित किया। आर्य समाज ने एक उपसमिति बना दी यह उस के संयोजक मनोनीत हुये। हरिजन बस्तियों में मैंने सप्ताह में दो बार जाने के लिए प्रस्ताव रक्खा और इनसे कहा कि साहनी साहब, आप तो अन्य कार्यों में बहुत व्यस्त रहा करते हैं आप तो समय दे नहीं सकते और आप का साथ में चलना परम आवश्यक है। इन्होंने जो उत्तर दिया वर्तमान समाजियों के लिए विशेष अनुकरणीय है। इन्होंने कहा—विद्या भास्कर जी! मैं महर्षि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द का अनुयायी हूँ दयानन्द के बताये हुये मार्ग पर चलने का दृढ़ संकल्प कर चुका हूँ। आर्य समाज के किसी भी कार्य के लिए मैं अपना सर्वस्व बलिदान कर सकता हूँ। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह दयानन्द का वीर सेनानी आज भी मेरे सामने बैठा हुआ उक्त पंक्तियों को बड़ी दृढ़ता के साथ मेरे हृदय पटल पर अंकित कर रहा है। यह है साहनी साहब के दृढ़ संकल्प एवं कर्तव्य निष्ठा का एक ज्वलन्त प्रमाण।

इनका जीवन बड़ा ही सरल सात्विक और महान् था।

"यथा चित्ते तथा वाचि यथा व्यवस्था क्रिया।"

जो मन में वही वाणी में और वैसा ही कर्म में था। स्वाभाविकता, स्वाभिमानता, स्वदेश भक्ति, और सज्जनता की देदीप्यमान प्रतिमा थे। देश विभाजन से पूर्व साम्प्रदायिक दंगों में जन सेवा की पराकष्ठा से उन्होंने महान् आदर्श उपस्थित किया था।

३ अक्टूबर १९४७ को अपनी धर्म पत्नी के साथ वायुयान द्वारा दिल्ली पधारे। यहाँ पहुँच कर शरणार्थियों की भरपूर सेवा की। १९४७ अक्टूबर के प्रथम रविवार को साहनी साहब आर्य समाज करौल बाग में पधारे। आर्य समाज को अपना साधारण सा परिचय दिया और सेवा कार्य में जुट गये।

आर्य समाज करौल बाग का वर्तमान विकसित रूप साहनी जी के प्रयत्न का ही परिणाम है। कुछ ही दिनों में दिल्ली के नागरिकों में कर्मठ आर्य वीर ने अपनी क्रिया शीलता, योग्यता, व्यवहार कुशलता, प्रचुर-पुरुषार्थ, एवं अनेक दिव्य गुणों के कारण विशेष स्थान प्राप्त कर लिया।

१९५२-५३ में आर्य केन्द्रीय सभा के मंत्री पद को अलंकृत किया। सन् १९६१ में मई में सार्वदेशिक सभा का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव एवं नवम आर्य महासम्मेलन को आयोजित किया गया। साहनी जी को शोभायात्रा (जुलूस) का संयोजक बनाया गया था। साहनी साहब ने शोभायात्रा की शोभा को अपने अनथक परिश्रम से इतना बढ़ा दिया था कि यदि यह कहा जाये कि यह जुलूस अभूत पूर्व था तो कोई अनुचित न होगा। इन्होंने कई शिक्षा संस्थाओं का निर्माण किया तथा उन्हें सर्व प्रकार से सशक्त बनाया। सन् १९५० में सत्भ्रावाँ आर्य कन्या महाविद्यालय का निर्माण किया। इस संस्था के निर्माण एवं विकास में इस महापुरुष का विशेष योगदान है। आर्य विद्या ट्रस्ट दिल्ली के सम्भ्रान्त सदस्य रह कर पूर्ण सहयोग प्रदान करते रहे। इनके अतिरिक्त महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक टंकारा को, पंजाब भाषा आन्दोलन को आर्य महासम्मेलन मथुरा को साहनी साहब से विशेष बल मिला।

आर्य समाज का जगमगाता दीप सहसा बुझ गया

काल कराल की गति विचित्र है। क्रूर काल ने शुक्रवार ६ मार्च १९६४ की शाम को पाँच बजे अचानक ही इस वीर सेनानी की हृदय गति पर आघात किया और क्षण भर में ही यह जाज्वल्यमान जीवन दीप बुझ गया और समस्त आर्य जगत् शोक के काले बादलों से तिरोहित हो गया। आर्य जगत् को कुछ सन्तोष है कि उनके पुत्र आज भी उन्हीं के पद-चिह्नों पर चलते हुए आर्य समाज के विकास में संलग्न हैं।

—विद्याभास्कर शास्त्री

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान

के

लेख पढ़ कर

मुझे हार्दिक प्रसन्नता होती है—

महात्मा आनन्द भिक्षु

आर्य समाज के दो रत्न

स्व० म० कृष्ण : महात्मा आनन्द स्वामी

इस अंक के प्रथम और अंतिम पृष्ठ पर पाठकों ने स्व० महाशय कृष्ण व महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के चित्र देखे हैं। यह दोनों महापुरुष वस्तुतः पंजाब में आर्य समाज को उन्नत रूप देने का कारण हैं।

दोनों ही पत्रकार, धुन के धुनी, और आर्य समाज के लिए सर्वस्व समर्पण की भावनाओं से ओत-प्रोत·····वस्तुतः हमारे आदर्श हैं।

श्री महाशय कृष्ण आज हमारे मध्य नहीं हैं अतः उनकी स्मृति में हम सादर श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। प्रभु हमें बल दे कि पंजाब में आर्य समाज अपना गौरव पुनः स्थापित कर सके। श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी जी आज भी देश विदेशों में वेद प्रचार की अलख जगा रहे हैं। उनके चरणों में बैठ कर अनुपम शांति प्राप्त होती है। वस्तुतः ऐसे महान् संन्यासी का आशीर्वाद ही हमारी शक्ति है। हम सादर उनके प्रति नतमस्तक हैं।

—संपादक

भूल सुधार

इस अंक में प्रकाशित "परख कर देखो" लेख के लेखक पं० प्रेमचन्द शास्त्री विद्या-भास्कर हैं। भूल से उन का नाम रह गया। पाठक सुधार लें।

—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Special Feature

—Sant Ram Anand M.Sc.

Explosion of Population and Birth Control

Catastrophy

Horible'. exclaimed the statistician, while pondering over the facts and figures collected by him about the explosion of human population. But like other species of animals kingdom he finds an ultimate limit of this too, though the limit in this case is very shocking, being 12 quadrillions, giving the world population-density of 240 millions per sq. mile, instead of 60 as at present. Can so many persons be accomodated ? Evidently the answer is no, and therefore the figure is hypothetical. This may be so, but the fact is, that the population is growing continually and from the last twenty years the growth is so quick that it appears as if an explosion of population has taken place carrying the world to its ultimate limit.

According to J.D. Durand of the University of Pennsylvania the population of the world in 1800 A.D. was 980 millions ; and according to U.N. statisticians in 1920 it was 1862 millions. This means that the population doubled in 120 years In 1965, the figure rose to 3280 millions and is expected to become 3620 millions in 1970. Thus doubling the population in 50 years, Similarly it is estimated that in the year of 2000 A.D. it will shoot up to the limit of 7410 millions doubling itself in 30 years. This is considered as the present rate of growth of the population which comes to be equal to 2.4%.

The rate of increase in the production of food material is only 1%. Thus food lags pehind by 1.4%, which gives a severe shock when we look 30 years ahead of the present time.

It should be noted that though the growth of population is taking place through-out the world approximately at the same rate, the menace of explosion is believed to be quite prominent in Africa and Asia where India and China are specially mentioned. This is perhaps due to the initial population-densities of the two countries because though the increase in population is mainly determined by deaths and births, span of life and population density also count. To understand this we consider here the growth of population of a village which is inhabited by hundred persons of all ages with the span of life equal to one hundred years.

It is assumed and perhaps assumption is the fact that the world is equally divided into two sexes and also the children born depends upon the number of girls in the puberty period which is about 25 years in the life of a women. Thus in this village there would be 12 or more accurately 12½ girls in sexual maturity in the population of one hundred ; further as all have their normal lives, only one dies every year, that is the death rate is 1% per annum.

According to Dr. Chandrasekhar, 40 children per thousand are

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

born in India every year. Considering this assumption correct, new babies born in the village described above, will be four per year. Therefore, total number of children born during the puberty period of the fair sex population will be (25×4=100) one hundred in 12.5 families Thus there aught to be eight children in one family. Death-rate being 1% (one percent) the rate of increase of population will be 3% ; that is, the population after one year will be 103 and at the end of second year will be 106.09. Carrying the calculation by compound rate of population growth, the persons living in the village will be doubled in 23.5 years, and if this period is repeated 25 times, that is, in 570 years, the population in the village will become 3354 millions. Thus at 3% rate of growth, population of the village within six centuries only will touch the present day world's figure for population.

Considering the span of life as fifty years, the death rate of the village will be 2% per annum. There would be 25 girls in puberty period and, therefore, if children born per thousand are 43 or four per hundred as before, total children born by 25 girls in 25 years will be 100. Consequently off-spring of each family will consist of four. Rate of growth will be 2 per annum, less than when the life is long. It should be noted that this is not due to shorter life but due to comparatively less birth as shown below.

The following table gives the birds' eye view of the growth of the population of the village when children born per family are from 2 to 10 in two cases when the span of life is 100 years and also when 50 years.

	Rate growth Span of Life 100 years		50 years
	0		0
	0.65		1.0
	1.0		2.0
No. of childern per family	Rate of growth % 100 years Span of life 50 years		Doubling period 10 years sparn : 50 year
2	0	0	— —
3	0.68	1.0	116.0 70
4	1.0	2.0	70.0 35
5	1.5	3.0	47.0 23.5
6	2.0	4.0	35.0 17.9
7	2.5	5.0	18.3 14.2
8	3.0	6.0	23.5 11.8
9	3.5	7.0	20.0 10.2
10	4.0	8.0	18.0 9.0

From the above chart it is evident that the population will be stationary only when the off spring per family is 2 only, whether the span of life is 100 or 50. But when the off-spring is 3, rate of growth in one case is 0.68% and in the other case is 1.0%. When life is long, the population will double in 116 years and in the other case it will take 70 years. Further we see that as the off-spring increases, the period for

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

the doubling of population continually decreases. In the last case the period is only 18 years when life is long, and 9 years when it is short.

Thus the shorter the span of life for the given number of childern born per family, the quicker is the approach to the catastrophy. It shonld be noted that if the off-spring is less than two then the life in the village will disapear soon.

Population explosion in India

Too much fuss is created about the abnormal growth of population in India. Fifty thousand arriving every day, how to feed them, is the top most-cry of our minister of family-planning. According to this statment children born per year are nearly two crores, out of which about 80 lacs die. So the new mouths to be fed are about one crore every year.

According to U. N. Demographic yearly book, the yearly increase in world's population is 6.3 crores, India being 1/6th of the whole world, the above stated increase in its population is quite proportionate.

To understand the growth of population of India with respect to that of the world, we give below the population of the world after an interval of 10 years and also the rate of growth during successive decades.

Year	Population in Millions	Rate of growth % per year (average during decade)
1920	1862	
30	2070	1.0
40	2295	1.0
50	2517	0.9
60	2991	1.7
65	3280	1.9
70	3626	2.1
80	4487	2.2
90	5704	2.4
2000	7410	2.7

From the table it is evident that the growth of population was only 1% from 1920 to 1940. During the period of the 2nd world's war, it decreased, slightly, but after the war it jumped up suddenly to 1.7% and then it began to increase continually with an accelerated rate. Can there be any retardation possible to this population growth ? U.N. statistician believe that by artificial method, of birth control, it would be possible to keep the actual figure in 2000 A.D. down to six thousand millions, but other cxperts are doubtful, because if any 'control' is started to-day, its effect will not be visible before 20 years, when a newly born child attains its maturity.

Now let us consider the growth of Indian population. According to the consus of 1921, the population of India was 3189×10^5 and the area of the country was 1805332 sq. miles, Therefore the 'population density' was 177 persons per sq. mile. In 1931, the population increased to 3528×10^5 so the 'density' became 193.6 per sq. mile. The com-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

pound rate of growth during this decade is calculated to be equal to 1.0% the same as in the case of world's population which remained the same in the next two decades. In the case of India, therefore, there is no reason to believe it otherwise, that is, here too the rate of growth in the next two decades must have been only I.0%.

Accordingly the population of our country in 1941 ought to be 3895×10^5 and in 1951, 4281×10^5.

But unfortunately, India was divided in 1947. 10 Crores of Muslims living here, were awarded a separate 'home-land' but only half of them went to the other side and made their home land an orthodex Muslim State, accomodating also one crores Hindus in East Bengal, half of whom were driven out later on. Thus Pakistan began to function with a meager population of six Crores on comparatively large area.

To have an idea of the growth of Indian population and its rate of increase in successive decades, population figures are tabulated below for the convenience of the readers. The population of 1947 is that of 'Bharat' having total sq. milage of 11.8 lacs.

Year	Population in millions	'Density per sq. mile	Rate of growth per cent (in decade)
1921	319	177.0	
1931	353	193.6	1.0
1941	389	216.0	1.0
1951 (calculated)	367.6	311.0	1.0
1962 (mid)	449.0	380.0	1.8
1966 (mid)	473.9	400.0	1.8
1947 (calculated)	353	300,0	

The results given above tally well with those given in the yearly book of U.N. Therefore it is crystal clear that there is nothing abnormal in the growth of its population. It is as is in the remaining world. The sudden change in its population density in 1947 is due to unfair partition of the country in two parts.

Cause and remedy

The cause of this explosion after the 2nd world's war, is believed to be the inveestion and availability of D.D.T. and anlibioties by means of which death rate began to fall abruptly while births remained the same, on account of which there happened to be a glut of population. It is quite believable that improved hygiene and better medical care of people in general might have increased the span of life but longevity will increase only the number of old people in the community without increasing the rate of growth of the population. In fact the rate of growth will decrease, because as shown above the relative number of girls in puberty will decrease. Moreover now a large proportion of people will be in the ages when death is expected sooner than otherwise. Therefore the death rate may increase. Consequently incrcase in age may not give rise to any alarm.

In the case of India, it should be noted that in this country there are five and a half lacs of villages accomodating 80% of population of

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

the country where 'life' is not effected much by the modern invention concerning general health or maternity. Therefore, in case of India explosion of population due to such inventions is negligible. In spite of this and all possible checks, the population of India as that of world will be doubled after 30 years or so as stated above. But it may not be serious in countries like Russia, where population density at present is 25 per mile only.

Thus the 'population density' is an important factor regarding the population problem of any country. In the case of India much trouble is due to influx as suggested above from Pakistan etc. But whatever the cause of such a glut, it is an admitted fact that the world is quite saturated with population as far as the availability of food is concerned. But the worse is that the 'growth' is taking place with an accelerated speed.

Therefore man has to consider and discover some devise to save humanity from the clutches of population dragon. For this purpose the wise men of the time have thought it fit to control births by some artificial devices such as loop, sterlisation, abortion, 'birth control pills', vasectomy and tubectomy. To control the population, in Japan abortion is made legal, in England homo-sexuality is removed from the list of illegal subjects. In America, birth control has been put in practice for the last ten years but Americans being mostly Roman Catholics, are forbidden to use such artificial contrivances because they lead to immorality. Instead of such methods Pope Paul has adviced his followers to exercise birth-control by self-control. But this is just like preaching stocism to hedonists for whom sensual pleasure is the chief good. Here is a news from America that a grown up lady about 50 years old went to Family Planning centre and asked for birth control pills. The doctor look at her attentively. She understood the surprise of the doctor and corrected herself saying, of course, for my daughter who is 18 years old. Is she married ? No, no doctor, I am sorry I do not like to bother myself about my daughter's companions or her whereabouts during day or night. Remembering that this not a fiction but a news, is there not a serious revolution in the conception of mother-hood ? It is not true that on account of invention and availability of artificial contrivances of birth control, the standard or morality has gone down to the lowest rung of one's conception ? In fact our morals specially in matter of sex have suffered so serious a change that we are forced to redetermine some new values or a new standard of life.

Do you know that according to the report sponsored in July, 1967 by 'the Central Council for Health Education London, majority of the boys and girls (aged from 15 to 19) not only believed in pre-marital sex, but many of them had practical experience also ? On account of this fact, the Family Planning Association of that country has reversed its old decision of giving advice on contraceptive to married women only. Now any single girl can have it if she ask for it.

Thus it is clear that such an unnatural system of birth control has started a revolution of sex behaviour which may sweep over the whole world. Besides causing the pervertion in the conception of morality, the artificial birth control is proved harmpful to some while causing

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

mental derangement to all. Reason is this that when some organ of the body is allowed to perform its normal function there must be some reaction and if this is prevented in any way, it must react on the body and mind of the person concerned.

Why not, then adopt the natural method of birth control ? Is it difficult ? Of course it is so, specially for the hedonistic world where sex pleasure is believed to be the highest aim of life. But in case of India, it is different matter. Its culture being based upon self-denial and self-control, people here at large have strong faith in celibacy (Brahmcharya) and think it not only essential for higher life but for salvation too.

No doubt it is true that our present educated community being under the spell of Westernism, is wavering far away from this noble principle and has lost all faith in the past. But still it is possible that the idea of self-control, being preached from generation to generation, might be lurking though in a dorment condition, in the core of the hearts of our young people, which can be evoked by some suitable system of education having roots in the Indian soil.

Thus if we introduce this item of Indian culture into the educational system, there is no reason to disbelive that our young people may not respond.

Control in Vedas—

It is a well known fact that the Indian culture is mostly based upon Vedas—the oldest books in the world. They also put the limit to nativity (birth). For example in Rig Veda (10,85,45) it is said.

दशस्यां पुत्रान धेहि पर्णाय एक दशं कृधि

In this verse prayers are offered for a bride that she may be blessed with ten sons and one husband. According to Risi Dayananda, Vedas being books for the whole world and for all times, have put the maximum limit to the number of children in a family. Sayanacharya, another great scholar of Vedas of the fourteenth century believed that the blessings in the verse is for one son and one daughter. His view seems to be based on the well known proverb of the vedic times दश पुत्रण्यां, कन्यां that is, tensons are equal to one daughter. The word 'pati' according to him stands for a 'son' on the authority of another verse of the same veda

पुत्रासं यत्र पितरो भवन्ति

which means 'child is the father of man'. How far this version is accepted by the learned, we cannot say but it is a fact that comparatively a large number of girls in a community is an important factor of the explosion of population. India also, being well versed in 'eugenic science' a science by means of which production of fine and limited off springs is possible, can control easily the growth of population by natural indigenous process.

In European countries where self-control specially in matters of sex is rediculed, there is always a large number of illegitimate children. For example last year it was estimated that in England there were 70,000 such children and 1,000,000 abortion inspite of all sorts of artificial birth control, prevalent in the country.

Why is then our Govt. adopting such dirty and heinous methods for the control—of the population. Is it due to some external political pressure ? Well it is a matter of serious thinking for us all. ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कठोपनिषद् कथामाला

स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी की लेखनी का पुण्य प्रसाद

●

कथा-सार

गृहस्थी सुखी रखना चाहते हैं। सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? ईश्वर की कृपा, उसकी निकटता का आनन्द तुम कैसे प्राप्त कर सकते हो ? श्रेय क्या है ? प्रेय क्या है ? माता-पिता अपनी सन्तान को धर्म-मार्ग पर कैसे चला सकते हैं ? इत्यादि बातों का ज्ञान इस कथा द्वारा होता है।

दान—सच्चा-दान—आतिथ्य महिमा, ईश्वर क्या है तथा उसे हम कैसे प्राप्त कर सकते हैं ? यह बातें भी सरल भाषा में वर्णन की गई हैं।

बहनो और भाइयो !

बड़े सौभाग्य की बात है कि आज से हम लोग कई दिन पर्य्यन्त धर्म—चर्चा करने के लिये इकट्ठे हुए हैं। चर्चा का विषय उपनिषद् होंगे। उपनिषद् के अर्थ समीप बैठने के हैं। उपनिषद् से अभिप्राय उन शिक्षाओं से है जिनके द्वारा मनुष्य ईश्वर के समीप हुआ करता है। उपनिषद् कई हैं। विषय की दृष्टि से 'ईश' और कथा की दृष्टि से 'कठ' श्रेष्ठ है। कठोपनिषद् यजुर्वेद की कठ शाखा का एक अंग है। शाखा इस समय नहीं मिलती है। उसका एक भाग जो कठोपनिषद् है अलग हो जाने के कारण मिलता है। यह उपनिषद् वाजश्रवा और नचिकेता—पिता पुत्र-के संवाद के साथ शुरू होता है। पिता ने सर्वमेध यज्ञ किया अर्थात् जो कुछ उसके पास था सब दान करने लगा। उसने बिना दूध देने वा दूध दे सकने वाली गायों का भी दान किया। नचिकेता सोचने लगा कि जो दानी ऐसी निकम्मी वस्तुओं का दान करते हैं वे आनन्द रहित लोक को प्राप्त होते हैं। ऐसे दान से लेने वाले को तो कुछ फायदा होता नहीं वरन् दान में ली हुई चीज़ उसे भार रूप हो जाती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नचिकेता के पिता से बार-बार यह पूछने पर कि वे उसे किसको दान देंगे पिता ने क्रुद्ध होकर कहा कि वह उसे (नचिकेता) मृत्यु के लिये देंगे। उत्तर के दो भाव हो सकते हैं। एक तो अनिष्ट और अमंगलकारी होना और दूसरा किसी गृहस्थ विद्वान् के लिए पुत्र को देना। नचिकेता दूसरे भाव को लेता और अपने लिए लाभदायक समझता हुआ घर से चल दिया और यमाचार्य्य के पास पहुँचा। वह सोचने लगा कि मैं बहुत से विद्यार्थियों में तो अच्छा हूँ, बहुतों में मध्यम हूँ। न मालूम यम मुझे कौन सा काम देंगे। यम के यहाँ पहुँचकर नचिकेता तीन दिन तक भूखा पड़ा रहा परन्तु किसी ने उसकी सुधि न ली।

आतिथ्य-महिमा

कहा जाता है कि जिस कम बुद्धि वाले गृहस्थ के यहाँ कोई विद्वान् आता है और भूखा पड़ा रहता है उसके पुत्रादि सब नष्ट हो जाया करते हैं। किसी धर्मपरायण व्यक्ति ने यम को यह चेतावनी देते हुए आतिथ्य करने की प्रेरणा की। उसने यह बात केवल डराने के लिए नहीं कही थी, किन्तु इसमें कुछ तथ्य है। आज कोई व्यक्ति किसी का आतिथ्य नहीं करना चाहता तो वह चाहता है कि उसे विदा करे। इसके लिये उसे कुछ रुखाई से काम लेना पड़ता है। इससे मधुरभाषिता जाती है, मधुरभाषिता न रहने से कोई विद्वान् उसके पास नहीं जाता, न अपने पास आने देता है और वह सत्संग से लाभ उठाने से भी वंचित हो जाया करता है। सत्संग के अभाव से श्रौत और स्मार्त कर्म छूट जाते हैं। विद्वानों की उपेक्षा से सन्तान भी पैदा नहीं कर सकता, यदि पैदा भी हुई तो वह मूर्ख रहेगी,जो मरने से भी बदतर है। सन्तान के सम्बन्ध में तीन सूरतें हुआ करती हैं—

१. पैदा न होना,

२. पैदा होकर मर जाना,

३. मूर्ख रहना।

मूर्ख सन्तान अच्छी नहीं होती। क्योंकि वह पग पग पर दुःख दिया करती है।

उपनिषद् के इस भाग में आतिथ्य का महत्व दर्शाया गया है। यह चेतावनी सुनकर यम नचिकेता के पास गये और उसने क्षमा माँगकर उनका यथाविधि आतिथ्य किया और इस अवज्ञा के बदले में नचिकेता से इच्छानुसार वर माँगने को कहा। नचिकेता ने इस अवसर से लाभ उठाकर तीन वर माँगे।

नचिकेता के तीन वर

नचिकेता ने पहला वर यह माँगा कि 'मेरे पिता जी मेरे यह कहने पर कि "निकम्मी चीजों का दान व्यर्थ है" नाराज हो गये हैं, उनकी नाराजगी दूर हो और वे मुझ से पुनः प्रेम पूर्वक पूर्ववत् व्यवहार करें।' धन्य हैं वे पुत्र जो पिता के अपराध को भी अपना अपराध मानकर उनकी प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता मानते हैं। धन्य हैं वे माताएँ जो ऐसे पितृ-भक्त पुत्रों को जन्म देती हैं और उन्हें जैसा चाहती हैं बना लेती हैं। इस सम्बंध में अवध के राजा ऋतुध्वज की पटरानी मन्दालसा की कथा प्रसिद्ध है।

मन्दालसा वैराग्यवती थी। वह अपनी होने वाली सन्तति को भी अपने ही समान बनाना चाहती थी। जहाँ उसने प्रसव किया वह एक बहुत मामूली घर था।उसमें बहुत सादे वैराग्य सूचक चित्रादि लगे थे। उस घर का वातावरण पूर्ण वैराग्ययुक्त था। बालक पैदा हुआ, रोया। माता कहती है, बच्चे ! क्यों रोता है ? अपने कर्म की वजह से ही तू यहाँ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आया है, यह तेरा दुर्भाग्य है।" इसी प्रकार उसने चार बच्चों को यही प्रेरणा की। इन शिक्षाओं का फल यह हुआ कि जब उन चार बच्चों ने गुरुकुल छोड़ा तो वे राज करने की इच्छा से उपराम होकर वन को चले गये। इस पर जब राजा दुःखी हुआ तब मन्दालसा ने राजा को उत्तराधिकारी देने की प्रतिज्ञा की। रानी ने फिर राजमहल के एक भव्य प्रासाद में प्रसव किया। नवजात बच्चे से उसने कहा, "बच्चे! रोता क्यों है ? तू तो दुनियां को रुलाने के लिए आया है। वह लड़का भी गुरुकुल गया और अपने अन्य चार भाइयों के आग्रह पर भी वह गुरुकुल से वन में न जाकर सीधा राजधानी को लौट आया। निस्सन्देह पुत्रों को बनाना माता के ही आधीन है। सन्तान के इच्छानुसार बनाने में पिता का भी बड़ा हाथ है। उन दिनों पिता भी अच्छे होते थे। उपनिषदों में ज़िक्र है कि पिता जब दूसरे आश्रम में जाया करता था, व दुनिया से कूच किया करता था तो अपने बड़े पुत्र को बुलाकर कहा करता था :—

पिता का प्रश्न—'त्वं ब्रह्म'
पुत्र का उत्तर—'अहं ब्रह्म'
पिता का प्रश्न—'त्वं यज्ञः'
पुत्र का उत्तर—'अहं यज्ञः'
पिता का प्रश्न—'त्वं लोकः'
पुत्र का उत्तर—'अहं लोकः'

इन प्रश्नोत्तरों के सम्बन्ध में बृहदारण्यक में अच्छी व्याख्या है। ब्रह्म का अर्थ है ईश्वर, विज्ञान, वेद और बड़ा। यहाँ ब्रह्म का अर्थ वेद अथवा शिक्षा से है। यहाँ पिता पुत्र को शिक्षा देता है कि जितनी मैंने शिक्षा प्राप्त की है उतनी तो तू प्राप्त ही कर वरन् जितनी प्राप्त करने में मैंने उपेक्षा की है वह भी तू प्राप्त कर। यज्ञ उत्तम कर्म को भी कहते हैं। पिता शिक्षा देता है कि जितने उत्तम कर्म मैंने किए हैं वे तू करेगा ही परन्तु जिनके करने में मैंने प्रमाद किया है तू वह भी कर। पिता शिक्षा देता है कि जितनी कीर्ति मैंने उपलब्ध की है वह तो तू उपलब्ध कर ही परन्तु जिसकी उपलब्धि में मैंने त्रुटि की है तू वह भी उपलब्ध कर। पुत्र इन तीनों उत्तरदायित्वों को स्वीकार कर लेता है। इस प्रकार की शिक्षाओं से न केवल वर्तमान नस्ल वरन् आने वाली सन्तान भी अच्छी हो जाया करती थी, बशर्ते कि माता-पिता अपने दायित्व को पूरा करें।

दूसरा वर स्वर्ग प्राप्ति के सम्बन्ध में हैं ; उसे मैं छोड़े देता हूँ।

नचिकेता ने पूछा कि मरने के बाद आत्मा रहता है वा नहीं ? मुझे इस प्रश्न का कृपा करके उत्तर दे दें। यम ने इस बात की परीक्षा कर लेनी चाही कि नचिकेता इस शिक्षा की प्राप्ति का अधिकारी है या नहीं और इसीलिए उसे यम ने बहुत से प्रलोभन दिए परन्तु जब नचिकेता इन प्रलोभनों में नहीं फंसा तब यम ने उसे अधिकारी समझकर शिक्षा देना शुरू किया।

यम ने पहली बात प्रेय व श्रेय-प्रवृत्ति और निवृति की बतलाई। दुनिया के काम को अच्छी तरह करना प्रवृति व प्रेय मार्ग कहलाता है। आत्मा परमात्मा की बात निवृत्ति वा प्रेय माग कहलाती है। लोक और परलोक के साधन के लिए ये दोनों आवश्यक हैं। लोक की सिद्धि प्रेय से और परलोक की श्रेय से होती है। दुनियाँ ही जिनके लिए सब कुछ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है ऐसे लोगों की उपनिषदों ने निन्दा की है। ऐसे लोग अविद्या के बीच में विद्यमान रहते हैं। वे लोग मूर्खों की तरह इधर-उधर फिरते हैं ठीक वैसे ही जैसे अन्धों के पीछे अन्धा फिरता है। ऐसे अज्ञानी को परलोक की बात जरा भी अच्छी नहीं लगती। धन के लोभ से वह उन्मत्तहुआ फिरा करता है। ऐसे लोग आवागमन के चक्र से कभी नहीं छूटते। उपनिषद् प्रेय मार्ग की निन्दा नहीं करता। निन्दा उन लोगों की करता है जो दुनिया को ही सब कुछ समझ बैठते हैं। श्रेय को लक्ष्य में रखने वाले व्यक्ति दुनिया को इस प्रकार इस्तेमाल करते हैं जिससे वह उनके अन्तिम ध्येय की पूर्ति में सहायक हो न कि बाधक। अतः प्रेय और श्रेय दोनों मार्ग उत्तम हैं। प्रेय की उत्तमता उसके सदुपयोग पर ही आश्रित है।

आगे नचिकेता ने यम से एक प्रश्न किया है उसका तात्पर्य है कि जो धर्म से पृथक् है, अधर्म से पृथक है, भूत, भविष्यत् और वर्तमान से पृथक् है वह कौन है? यह प्रश्न नचिकेता का ईश्वर के सम्बन्ध में उचित ही था क्योंकि जो धर्म मनुष्य के हैं वे परमात्मा के नहीं। वह धर्म और अधर्म दोनों से पृथक् है। तीन काल हमारी दृष्टि से हैं। परमात्मा के लिए केवल वर्तमान है। यम ने इसका उत्तर दिया है कि :—

'सम्पूर्ण वेद जिस पद का वर्णन करते हैं,सब तप ब्रह्मचर्य्यादि जिस पद की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं वह पद ओ३म् है। जब तक मनुष्य तप ब्रह्मचर्य्यादि का सेवन नहीं करता तब तक वह ईश्वर को नहीं जान सकता। ओ३म् की एक बड़ी महिमा है वह यह है कि ओ३म् एक आदर्श है जिसके द्वारा जीवन का अन्तिम ध्येय जाना जाता है। अ, उ, म् की निम्न व्याख्या ध्यान देने योग्य है।

अ—जागृत अवस्था

उ—स्वप्नावस्था

म्—सुषुप्ति

यह क्रम बाहर से भीतर चलने का है। जागृत की अपेक्षा स्वप्नावस्था अच्छी है। सुषुप्ति में पूर्ण आराम मिलता है। इसीके बाद तुरीय अवस्था आ जाती है और मनुष्य ईश्वर को प्राप्त करता है। ओ३म् शब्द बड़े महत्व का है। उपनिषदों का रहस्य यही है कि वे मनुष्य को बाहर से भीतर ले जायें। ओ३म् अक्षर महान् है। इस ही अक्षर को जानकर मनुष्य की इच्छाएं पूरी हो जाया करती हैं।

ईश्वर का आश्रय श्रेष्ठ और महान् है। इसी आश्रय को पाकर मनुष्य ब्रह्मलोक में महत्ता प्राप्त कर लिया करता है।

ईश्वर प्राप्ति के उपाय

यम ने कहा—वह ईश्वर, यदि तुम चाहो कि बहुत पढ़ कर प्राप्त करो, प्राप्त नहीं हो सकता। श्रेष्ठ बुद्धि से भी प्राप्त नहीं हो सकता। प्राप्त उसे होता है जिसे ईश्वर स्वयं चुन लेता है। ईश्वर प्राप्ति हमारे आधीन नहीं वरन् उसीके आधीन है। जब तक मनुष्य यत्न करके अपने को थका नहीं लेता तब तक वह ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकता। जिस प्रकार बच्चा दूध पीने के लिए अपनी दूर खड़ी हुई माता के पास यत्न करके पहुंच जाता है और थक जाता है और माँ उसकी आशाभरी दृष्टि पर पिघल कर उसे उठाकर दूध पिला देती है इसी प्रकार मनुष्य के जगदम्बा माता के पास पहुंचने के लिए यत्न करके थक जाने पर जगदम्बा दया करके उसे अपना आश्रय दे देती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद ने कहा है हमारे अधिकार में केवल दो चीजें हैं।

१—ज्ञान

२—प्रयत्न

ज्ञान से मनुष्य अमृतत्व प्राप्त करता है। प्रयत्न (कर्म) से मृत्यु को पार करता है। परन्तु अमृतत्व प्राप्त करना अथवा मृत्यु से पार होना एक ही बात है।

इसका अर्थ यह है कि मनुष्य ज्ञान और कर्म से ही मृत्यु के पार हुआ करता है। परन्तु यह मोक्ष का केवल वह पक्ष है जो मनुष्य से छूटा करता है। वह पक्ष जो प्राप्त हुआ करता है वह आनन्द है। वह मनुष्य के न तो ज्ञान का फल है और न कर्म का, वह उसे ईश्वर ही की दया से प्राप्त हुआ करता है।

'जो चंचल हैं, जो दुराचारी हैं और जो अशान्त हैं वे भी ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते। बुद्धि से ही ईश्वर प्राप्त हुआ करता है। बुद्धि से नहीं वरन् ऋतम्भरा बुद्धि से, जो तीनों कालों में एक जैसी रहती है। जब मनुष्य दुश्चरित्रादि से मुक्त हो जाया करता है तब यह बुद्धि प्राप्त हुआ करती है।

२

कथा सार

अधिकांश नर-नारी मृत्यु से भयभीत रहते हैं। इसका कारण मृत्यु के वास्तविक रूप को न जानना ही है। मृत्यु का वास्तविक रूप क्या है? मृत्यु के समय क्या सुनने से शान्ति मिल सकती है? मृत्यु के बाद क्या शेष रहता है? आत्मा क्या है? परमात्मा से उसका क्या सम्बन्ध है? परमपद प्राप्ति के क्या उपाय हैं? सगुण तथा निर्गुण में क्या भेद है तथा उनके फल क्या हैं? इन्द्रियों का अनुसरण न करके आत्मा का अनुसरण करने में क्या लाभ हैं यह सब इस कथा में बताया गया है?

बहनो और भाइयो!

कल आप लोगों को कठोपनिषद् की शुरू की बातें बतलाई गईं थीं, कि किस प्रकार नचिकेता ने यम से तीन वर प्राप्त किये थे और यम ने किस प्रकार तीसरे वर का उत्तर देने से पूर्व इस बात की जाँच की कि नचिकेता उस उत्तर का अधिकारी है या नहीं तथा किस प्रकार उसे अधिकारी समझ कर प्रारम्भिक ज्ञान की बातें शुरू की थीं।

मरने के बाद क्या बाकी रहता है?

नचिकेता ने पूछा, कि मरने के बाद कुछ बाकी रहता है? इस प्रश्न का उत्तर कुछ लोग हाँ में देते हैं और कुछ नहीं में। जो लोग नहीं में उत्तर देते हैं वे ग़लती पर हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ये लोग शरीर की घड़ी के साथ उपमा देते हैं। शरीर के सम्बन्ध में यह बात ठीक नहीं है। शरीर के भीतर आत्मा की सत्ता है, यह आत्मा शरीर में स्थिर रूप से रहता है।

मरने के बाद आत्मा रहता है और यह भिन्न-भिन्न योनियों में जाता है। कुछ आत्मायें जंगम योनि में और कुछ वृक्षादि स्थावर योनि में जाती हैं। इस योनि-भेद का कारण आत्मा का अपना कर्म और ज्ञान है। थ्योसोफिस्टों का विश्वास है कि मनुष्य की मृत्यु होने पर उसका आत्मा पुनः मनुष्य योनि में ही जाया करता है, नीचे की योनियों में नहीं जाता, क्योंकि विकासवाद के सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य उत्तरोत्तर उन्नति को प्राप्त हो रहे हैं। थ्योसोफिस्टों की यह बात भी सृष्टि के सार्वत्रिक नियम के विरुद्ध है। यह नियम है कि विकास के साथ ह्रास अवश्य होता है। इस नियम से मनुष्य नहीं बच सकता।

कर्म फ़िलासफ़ी के क्षेत्र में हम देखते हैं कि पुण्य के साथ पाप भी मौजूद है। मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है, उसका यह जन्म-सिद्ध अधिकार है परन्तु चोरी आदि बुरे कर्म करने से उसे जेलखाने जाना पड़ता है वहाँ उसकी आजादी छिन जाती है। यदि विकासवादियों के मत से दुनियां शासित होती तो आजाद आदमी परतन्त्र कैसे होता? वस्तुतः यह भ्रम कर्म-सिद्धान्त के न समझने से ही हो जाया करता है। मनुष्य कर्म-फल से ही मनुष्य-योनि प्राप्त करता है और कर्म-फल से ही उसे खोता है।

आत्मा का स्वरूप

यम ने नचिकेता को आत्मा के सम्बन्ध में कई जरूरी बातें बतलायीं। वे इस प्रकार हैं—

१—आत्मा न उत्पन्न होता है, न मरता है।

२—आत्मा एक स्वतन्त्र सत्ता है, शरीर की सत्ता से उसका कोई सम्बन्ध नहीं शरीर का ही जन्म होता है और शरीर का मरण ही होता है।

३—आत्मा न किसी का उपादान कारण है और न उसका कोई उपादान कारण है।

४—आत्मा के स्वाभाविक गुण ज्ञान और कर्म हैं।

जिन विद्वानों ने उपनिषदों का मनन किया है वे आत्मा के उपर्युक्त स्वरूप को एक स्वर से स्वीकार करते हैं, ऐसे विद्वानों में पश्चिम का एक विद्वान, तत्त्वदर्शी और महान् कवि इमर्सन है, उसने अपनी एक कविता में उपनिषदों के इस तत्व का हूबहू निरूपण किया है परन्तु उपनिषदों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने की उदारता नहीं दिखलाई। हाँ शोपनहार जैसे विद्वानों ने यह कृतज्ञता अवश्य प्रकट की है।

अगर कोई किसी का वध करता है और वह समझता है कि मैंने आत्मा को मारा या कोई दूसरा आत्मा को मरा हुआ समझ ले तो वे दोनों गलती पर हैं। उपनिषदों के उपर्युक्त तत्त्वों के अनुसार आत्मा अनश्वर है, उसका कभी नाश नहीं होता, इसी बात का गीता में भी स्पष्ट वर्णन आया है। वस्तुतः गीता उपनिषद् रूपी गायों का दूध हैं, अर्जुन रूपी बछड़ा उसका पान करता है।

कृष्ण के शब्दों में आत्मा को न तो हथियार काट सकते हैं, न अग्नि जला सकती है, न वायु सुखा सकता है और न पानी बहा सकता है। ऋग्वेद ने भी यही शिक्षा दी है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और बतलाया है कि "मैं कदापि नहीं मर सकता, मरते वे हैं जो अपने को शरीर समझते हैं" यदि हम लोग इस बात के रहस्य को समझलें तो सचमुच हमारा दुनिया का प्रोग्राम नष्ट भ्रष्ट नहीं हो सकता और दुनिया हमारे लिये सर्वश्रेष्ठ बन सकती है, तथा हमारा मुक़ाबिला दुनिया में कोई भी नहीं कर सकता।

आत्मा और परमात्मा का सम्बन्ध

उपनिषद् में यह भी कहा गया है कि किस प्रकार हमारे अन्तःकरण में आत्मा परमात्मा से सम्बन्धित है। ये दोनों धूप और छाया के सदृश हैं। आत्मा छाया के सदृश और ईश्वर धूप के सदृश है। ये दोनों हृदय में वास करते हैं। इन दोनों का सम्बन्ध कर्म से जोड़ा गया है, अर्थात् एक कर्म करके फलका भोगने वाला और दूसरा साक्षी रहकर फल का देने वाला।

इन्द्रियाँ कैसे कल्याणकारी बन सकती हैं

इस भौतिक शरीर के भीतर जो मन, बुद्धि इत्यादि इन्द्रियाँ और बाहर हाथ, पैर कान, आँख आदि इन्द्रियाँ हैं इनको इस प्रकार संयत किया जाय कि जिससे ये हमारे लिये दुनिया में अधिक-से-अधिक कल्याणकारी बनें।

उपनिषद् में एक अच्छे अलंकार से बतलाया गया है कि मनुष्य को किस प्रकार अपने मन, बुद्धि आदि इन्द्रियों को अपने अधिकार में रखना चाहिये जिस से वह अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सके।

हमारा शरीर एक रथ है उस रथ का सवार आत्मा है, कोचवान बुद्धि है। लगाम मन और घोड़े इन्द्रियां हैं। इस रथ को भी ऐसा होना चाहिए कि आत्मा के आधीन बुद्धि, बुद्धि के आधीन मन, मन के आधीन इन्द्रियाँ हों, तभी यह रथ, अभ्युदय और निःश्रेयस रूप धर्म-मार्ग पर चल कर सवार को निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचाने का कारण बन सकता है। यह शरीर रूपी रथ ऊपर कहे अनुसार दे सके, इसके लिए आवश्यक है कि आत्मा रूपी सवार सावधान रहे, यदि वह ज्ञानी है तो स्वयं न तो मन के पीछे चलेगा और न इन्द्रियों को दुष्ट घोड़ों की तरह बेकाबू होने देगा। उपनिषद ने बतलाया है कि आत्मा, मन, इन्द्रियाँ ये तीनों मिल कर कर्त्ता और भोक्ता हैं।

आदर्श

इसके लिये आदर्श चरित्र-निर्माण की आवश्यकता है। हमारा शरीर जड़ है, मन, अहंकार, चित्तादि सब जड़ हैं। जब आत्मा का इनसे सम्पर्क होता है तब वह इन्हें प्रकाश प्रदान करता है, बुद्धि से सत्यासत्य का निर्णय होता है, मन से संकल्प-विकल्प किये जाते है ग़रज कि बाहर और भीतर की सब इन्द्रियाँ आत्मा की वजह से ही काम करती हैं। जैसे रथ, सारथि के आधीन होता है उसी प्रकार हमारा शरीर भी ऐसा होना चाहिए कि जिधर आत्मा ले जाना चाहे ले जाय, न कि मन इन्द्रियों के आधीन हो। आदर्श यह है कि आत्मा के वश में बुद्धि हो, बुद्धि के वश में मन, मन के वश में इन्द्रियाँ और इन्द्रियों के वश में विषय हों। इसी आदर्श से आत्मा श्रेष्ठ होती है और मनुष्य का चरित्र उज्ज्वल होता है, विपरीत इसके जो मनुष्य अज्ञानी होते हैं वा इस आदर्श से विमुख होते हैं उनका मन सदा चञ्चल रहता है और उनकी इन्द्रियाँ उनके वश में नहीं होतीं, ठीक उसी प्रकार ही जैसे दुष्ट घोड़े सारथि के अधिकार में नहीं रहते। अतः आवश्यक है कि मन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर अधिकार रक्खा जाय। दुनियाँ की जितनी प्रसन्नता है वह सब मन की एकाग्रता पर ही आश्रित है।

चञ्चल मन वाले अज्ञानी लोग ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते और संसार में चक्कर लगाया करते हैं और जो ज्ञानी हैं, जिनके मन और इन्द्रियाँ अपने अधिकार में हैं और जो पवित्र हैं वे आवागमन दिलाने वाले कर्मों से मुक्त होते हुए ईश्वर मार्ग के पथिक हो जाया करते हैं।

महत्व-पूर्ण बात

उपनिषदों में बतलाया गया है कि परम पद किस प्रकार प्राप्त होता है। यह भी बतलाया गया है कि इन्द्रियों से परे उनके सूक्ष्म विषय होते हैं। उन विषयों से सूक्ष्म मन है, मन से सूक्ष्म बुद्धि,बुद्धि से सूक्ष्म महत्तत्व,महत्तत्व से सूक्ष्म प्रकृति, प्रकृति से सूक्ष्म आत्मा और आत्मा से सूक्ष्म कुछ नहीं हैं। इस रूपक का भाव यह है कि जब मनुष्य इस मन से आत्मा की ओर चलता है तब अन्तिम मार्ग पर पहुंच जाया करता है। आत्मा संसार के समस्त भूतों से सूक्ष्मतम है। सूक्ष्म बुद्धि वाले ही ईश्वर को देख सकते हैं। इस बुद्धि से मनुष्य बड़े अनोखे काम कर लेता है।

उदाहरण

एक राजा के पास दो चित्रकार गए। एक का नाम रवि और दूसरे का नाम कवि था। राजा की प्रेरणा पर दोनों ने दो दीवारों पर चित्र खींचना शुरू किया। रवि ने चित्र बना कर चित्र पर पर्दा डाल दिया। कवि ने दीवार को आइने की नाईं चिकना करके उस पर पर्दा डाल दिया। राजा आया। रवि के चित्रों को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। कवि ने भी अपनी दीवार पर पड़ा हुआ पर्दा हटाया। रवि के चित्र उसकी दीवार पर प्रतिबिम्बित हो गये। फल यह हुआ कि कवि के चित्र अधिक सुन्दर देख पड़े। यह वस्तुतः बुद्धि का एक चमत्कार है। कहावत है "जहाँ न पहुंचे रवि वहां पहुँचे कवि" तात्पर्य यह है कि मनुष्य जब अपनी बुद्धि को सूक्ष्म बनाया करता है तब वह न केवल लोक सिद्धि करता है वरन् दुनियां को भी अपने लिए अधिकाधिक उपयोगी बना लिया करता है। मन को बुद्धि की ओर ले चलने से बुद्धि सूक्ष्म हो जाया करती है।

चेतावनी

उपनिषद का वाक्य है—"उठो जागो !" यह आत्मसाक्षात्कार का मार्ग अत्यन्त कठिन है, इसलिए आत्मदर्शी लोग उस मार्ग को छुरे की धार पर चलने के सदृश बतलाते हैं। इसी उपदेश से जिज्ञासु को सावधान होकर कार्य करने की चेतावनी दी गई है और एक प्रकार से तपस्वी बनने की शिक्षा दी गई है। तपस्या से मनुष्य कठिन कार्यों के पार हो जाया करता है।

महाभारत का उदाहरण

सत्यभामा द्रौपदी के पास शिक्षा के लिए जाती है। द्रौपदी अपने उपदेश के अन्त में बड़ी महत्वपूर्ण बात कहती है। वह कहती है कि—"यदि तुम सुख चाहती हो तो आरामतलब बनने से सुख प्राप्त नहीं हो सकता। तुम कष्ट सहन करो सुख मिल जायगा। दुःख और सुख का चक्र है जिसे सामने रक्खोगी वही मिलेगा।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश्वर की उपासना

ईश्वर की उपासना दो प्रकार की होती है :—

(१) सगुणोपासना ।

(२) निर्गुणोपासना ।

सगुणोपासना वह है जिसमें प्रभु के सत्तात्मक दिव्य गुणों को धारण करके मुमुक्षु ईश्वर के पास होकर आनन्द प्राप्त करता है और निर्गुणोपासना वह है जिसके द्वारा मनुष्य ईश्वर के निषेधात्मक गुण को अपने भीतर से निकाल कर मौत के बन्धन से छूटा करता है ।

ईश्वर का शब्द नहीं, स्पर्श नहीं, रूप नहीं, जो आँख से देखा जा सके । इसी प्रकार रस नहीं जो ज़बान से चखा जा सके, गन्ध नहीं जो नाक से सूंघा जा सके । जो अविनाशी है, सीमा रहित है, महत्तत्व से भी सूक्ष्म है अचल है उसको निश्चयात्मक रीति से जान कर मनुष्य मौत के मुंह से छूट जाता है । इनका भाव यह है कि निर्गुणोपासना से हमारे से कुछ जाया करता है और सगुणोपासना से हमारे पास कुछ आया करता है । जब 'ओ३म्' कहकर उसका चिन्तन करते हैं तो रक्षा का भाव आया करता है ।

मृत्यु का रहस्य

उपनिषद् ने बतलाया कि जब मनुष्य के मरने का समय आवे तब उसे यम का उपदेश किया हुआ नचिकेता का उपाख्यान सुनाना चाहिए जिससे मृत्यु की वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त करके वह उसके भय से रहित हो जावे । मौत के रहस्य को समझने से ही मनुष्य को शान्ति मिलती है । जब मनुष्य समझता है कि मौत तकलीफ़ देने वाली है तो वह उससे डरा करता है । जब ऐसा नहीं समझता है तब नहीं डरा करता और यह तब होता है जब मनुष्य येह समझता है कि मैं आत्मा हूँ और शरीर वस्त्र के सदृश है । जब आदमी इस रहस्य को समझ लेता है और यह समझ लेता है कि पुराने-फटे कपड़ों को छोड़ने से मनुष्य दुःखी नहीं वरन् सुखी हुआ करता है और यह भी समझ लेता है कि आत्मा को नये शरीर रूपी वस्त्र धारण करने से दुःखी नहीं वरन् प्रसन्न होना चाहिए तब मृत्यु भयभीत नहीं कर सकती । कृष्ण ने गीता में कहा है कि जिस प्रकार मनुष्य फटे वस्त्रों को उतार कर नये वस्त्रों को धारण करता है उसी प्रकार आत्मा पुराने शरीर को छोड़ कर नया शरीर धारण करता है । इस शिक्षा के प्रकाश में मृत्यु दुःखदायक नहीं होनी चाहिए ।

आत्मवाद के समझने से ही मौत का दुःख और भय दूर हुआ करता है । यह शिक्षा तभी लाभदायक हो सकती है जब इसके अनुकूल आचरण हों । ईश्वर ने हमारी इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया है उनका स्वभाव बाहर की ओर, प्रकृति की तरफ देखने का है । जो धीर हैं वे इन्द्रियों का अनुसरण न करके आत्मा की ओर चलते हैं, वे आत्मा को देखते हैं, उन सब का मुंह भीतर की ओर होता है । इसी लिए शिक्षा दी गई हैं कि अपने को जानो (Know thyself) जब मनुष्य अपने को समझ लेता है तब वह अपनी मंजिल को जान लेता है और आत्मज्ञानी बन जाता है ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

३

कथासार

आस्तिकता की उत्कृष्टता, ईश्वर का स्वरूप, उसकी व्यापकता अर्थात् वह हमारे अन्दर तथा सारे ब्रह्माण्ड में किस रूप में व्याप्त है, मनुष्य तथा ईश्वरीय नियमों की विभिन्नता, ईश्वर प्राप्ति के साधन, जीव का स्वरूप, शरीर की वस्तु स्थिति, शरीर के लिये स्नान का महत्व, मनुष्य की अपनी तथा इन्द्रियों की सीमा से आगे जाने पर ही पाप तथा व्याधियाँ हैं, आदि बातें बड़े सरल ढंग से बताई गई हैं।

बहनो और भाइयो !

जैसा कल बताया जा चुका है, नचिकेता ने यम से प्रश्न किया था कि मरने के बाद कुछ बाकी रहता है वा नहीं ? यम ने उत्तर दिया था मरने के बाद आत्मा रहता है। वह आत्मा नित्य है। कल यह भी बतलाया गया था कि किस प्रकार मनुष्य ऊँची और नीची योनियों को प्राप्त करता व कर सकता है। कुछ बातें ईश्वर के सम्बन्ध में भी बतलाई गई थीं।

जब कर्म-फल भोगने वाला जीवात्मा ईश्वर के समीप हो जाता है और वह ईश्वर को जान लेता है तब सब लोग उससे प्रेम करने लग जाते हैं और वह सब प्राणियों से प्रेम करने लग जाता है।

अमेरीका की स्वतन्त्रता का युद्ध

अमेरिका के स्वातन्त्र्य-युद्ध के उदाहरण से मालूम होता है कि किस प्रकार ईश्वर-विश्वासी लोगों से मनुष्य प्रेम किया करते हैं। युद्ध हो रहा था, एक पक्का ईश्वर-विश्वासी भक्त रोगियों की सेवा-शुश्रूषा किया करता था, जब वह किसी रोगी सिपाही के पास जाता तो उसको देख कर ही रोगी का आधा रोग दूर हो जाया करता था। इसका कारण लोगों का उसके प्रति अगाध प्रेम ही था। सचमुच ही आस्तिक से कोई घृणा नहीं करता है।

वेद की शिक्षा

यजुर्वेद में कहा गया है कि विद्वान् लोग ईश्वर को हृदयाकाश में देखते हैं। तुम यदि परमात्मा को जानना चाहते हो तो आत्मा से उसे जानो।

आगे कहा गया—

'जो ज्ञान कांडी हैं—ज्ञानी हैं, जो कर्मकांडी हैं, वा दोनों में से कोई भी हैं, ऐसे पुरुष ही ईश्वर को जाना करते हैं।

ईश्वर का स्वरूप

अरणियों में जिस प्रकार आग छिपी रहती है, जिस प्रकार माता अपने गर्भ की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रक्षा करती है, उसी प्रकार ईश्वर को हृदय में स्थित समझ और इसे अपना प्रेम-पात्र बना कर ज्ञानकाण्डी और कर्मकाण्डी, दोनों को प्रति दिन उसकी स्तुति करनी चाहिए।

यज्ञ की आग अरणियों को घिसकर ही प्राचीन काल में पैदा की जाती थी क्योंकि अग्नि अरणियों में छिपी हालत में थी। अग्नि तब काम करती है जब वह व्यक्त हो जाती है। यही बात दियासलाई के सम्बन्ध में हैं। जगत् के पदार्थों में ईश्वर भी ऐसे ही व्याप्त हैं, परन्तु हम उसे नहीं देख सकते हैं। यदि हमारे देखने योग्य आँखें हों तो हम उसे देख सकते हैं अन्यथा नहीं।

उपनिषद् में बतलाया गया है कि सूर्य्यादि का उदय, अस्त होना ईश्वर की सत्ता के कारण है। इसी प्रकार अन्य सब देव, पृथिवी चन्द्रादि ईश्वर के आश्रय से ठहरे हुए हैं। कोई भी देव उसके नियम का उल्लंघन नहीं कर सकता, वे नियम अटल हैं अनुल्लङ्घनीय हैं।

मनुष्य और ईश्वर के नियम

मनुष्य के नियम तोड़े जा सकते हैं परन्तु ईश्वर के नहीं। ईश्वर की कुछ शिक्षाएँ उपदेश तौर पर हैं और कुछ नियम के रूप में हैं। ईश्वर के उपदेशों का हम उल्लंघन कर सकते हैं क्योंकि हम कर्म करने में स्वतन्त्र हैं। हम स्वतन्त्रता से उनका पालन और उल्लंघन कर सकते हैं परन्तु उसके नियमों के सम्बन्ध में यह बात नहीं है। उनको कोई नहीं तोड़ सकता। उदाहरण के लिये गेहूँ के बोने पर चना कदापि नहीं हो सकता।

ईश्वर की व्यापकता

आगे बतलाया है कि "जो ईश्वर यहां है वही परलोक में है। जो वहां है वही यहाँ हैं। जो ईश्वर में भिन्नत्व मानते हैं वे मृत्यु से मृत्यु को प्राप्त करते हैं।" इस शिक्षा के प्रकाश में भिन्न-भिन्न सम्प्रदायवादियों को भिन्न भिन्न ईश्वर नहीं मानने चाहियें क्योंकि वेद और उपनिषद में इसका निषेध किया है, उन्होंने ईश्वर एक ही बतलाया है।

ईश्वर प्राप्ति का उपाय

"यदि तुम ईश्वर को प्राप्त करना चाहते हो तो बाहर की ओर न चलकर भीतर की ओर चलो। जब मनुष्य भीतर की ओर चलता है तभी उसे ईश्वर की प्राप्ति होती है। अंगूठे के बराबर मात्रावाले हृदयाकाश में स्थित जीव के मध्य ईश्वर का निवास है अर्थात् वही स्थान है जहाँ ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ करता है, उस ब्रह्म-ज्ञान को पाकर मनुष्य हमेशा प्रसन्न रहता है। वही पुरुष (ईश्वर) ऐसी ज्योति है जो विकार रहित है। संसार की ज्योतियों में यह बात नहीं पाई जाती है। वे सब ज्योतियाँ त्रुटि पूर्ण हैं। अग्नि भी विकारमय है। ईश्वर सब का मालिक है। सदैव एक-रस रहने वाला है। जो आज है वही कल है।

शिक्षा

तात्पर्य यह है कि ईश्वर.प्राप्ति के साधन मनुष्य के भीतर ही हैं। जब हम अन्तर्मुखी-वृत्ति से उसका साक्षात्कार कर लेते हैं तब हम संसार के प्रेम के पात्र बन जाते हैं।

जीव

हमारा शरीर एक नगर है। उसके ग्यारह दरवाजे हैं और यह आत्मा का घर है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सिर, आंख, कान, नासिका का छिद्र, मुंह, नाभि, मल-मूत्र स्थान ये ग्यारह द्वार हैं। कोई उसे पाँच द्वार वाला, कहते हैं, कोई आठ और कोई दस द्वार वाला, कोई ग्यारह द्वार वाला और कोई असंख्य द्वार वाला भी कहते हैं। वस्तुतः यह गिनती का ही भेद है। असंख्य द्वार वाला कहने वाले शरीर के असंख्य छिद्रों के आधार पर ही ऐसा कहते हैं। उदाहरण के लिए हमारे समस्त शरीर के बालों की जड़ में छिद्र हैं जिन्हें रोमकूप कहते हैं।

स्नान का महत्व

स्वास्थ्य रक्षा के लिए स्नान करना अत्यन्त आवश्यक है। किसी साम्प्रदायिक भावना से इसका कोई सम्बन्ध नहीं, इसका सम्बन्ध वैज्ञानिक तत्वों से है। हमारे शरीर की फैक्टरी संसार की अन्य फैक्टरियों के सदृश नहीं है। यह निरन्तर चलती रहती है। इसमें बहुत मैला और कूड़ा पैदा हो जाता है। इस शरीर रूपी फैक्टरी की रचना बड़ी अद्भुत है। ईश्वर ने हमारे शरीर को छिद्रमय बनाया है वह मैल सूक्ष्म से सूक्ष्म जगहों में देख पड़ता है। खुर्दबीन से देखने पर बाल की जड़ में भी मैल की सफाई के लिए स्नान आवश्यक है। भोजन करने के समय या उसके बाद हाथ धोने इत्यादि का यही अभिप्राय है। यदि स्नान न किया जाय तो वे असंख्य छिद्र बन्द हो जायेंगे। मैल का बनना जारी रहेगा और निकलना बन्द हो जायगा। जिस हिस्से में भी मैल का निकलना बन्द होगा वहीं रोग पैदा हो जायगा, इसलिए प्रतिदिन स्नान करना चाहिए और ठीक रीति से करना चाहिए। इसीलिए लूई कोनी ने उपर्युक्त मैल को फ़ोरन मैटर कहा है।

नगर कैसा है ?

यह नगर चेतना सहित है, और नगर का मालिक आत्मा है जो स्वभाव से शुद्ध है। वह नगर के भीतर रहता है और नगर के कार्य में लाने से दुःखी नहीं होता और जब वह छोड़ देता है तब वह समस्त दुःखों से छूटकर मुक्त हो जाता है। तात्पर्य यह है कि शरीर जिस उद्देश्य से बना है उसी के लिए प्रयुक्त होने से मनुष्य दुःखी नहीं होता। कभी भी शरीर का दुरुपयोग नहीं होना चाहिए।

पाप कहाँ है

जहाँ सीमा का अन्त होता है वहीं पाप होता है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य जब सीमा के भीतर रहता है तब सुखी रहता है जब सीमा का उल्लंघन करता है तब दुःखी रहता है।

एक और उदाहरण

आँख का काम देखना है, हमें बतलाया गया है कि सब को मित्र की दृष्टि से देखो, परस्त्री को कुदृष्टि से न देखो। आँख का सदुपयोग इस और इसी प्रकार की शिक्षाओं के चरितार्थ करने में होता है। इसी प्रकार अन्य इन्द्रियों के सम्बन्ध में समझना चाहिए।

अर्जुन का आदर्श

अर्जुन तप कर रहे हैं, इन्द्र उनकी तपस्या से भयभीत हो जाता है। उनके तपोभंग के लिए इन्द्र अर्जुन के पास एक सुन्दरी अप्सरा भेजता है। वह तप भंग करने में और अर्जुन को अपने हावभाव इत्यादि से विचलित करने में असमर्थ जानकर निराश हो जाती है। वह अर्जुन से कहती हैं, "अर्जुन ! क्या तुम मुझे नहीं देख रहे ?" अर्जुन कहते हैं, "देवि ! मैं तुम्हें देख रहा हूँ। तुम मुझे कुन्ती के रूप में दीख पड़ती हो।" जब

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस प्रकार के भाव मनुष्य में आ जाते हैं तभी वह 'मातृवत् परदारेषु' की उज्ज्वल कहावत को चरितार्थ करता है।

इसी प्रकार व्याधि और रोग इत्यादि इन्द्रियों के दुरुपयोग के परिणाम होते हैं। आवागमन में रहकर जीव अपने कृत कर्मानुसार भिन्न-भिन्न योनियों में जाया करता है। जीव जहाँ जहाँ जाकर रहा करता है उनमें से कुछ के नाम इस प्रकार हैं—प्राण, अपान, वसु, अन्तरिक्ष स्थल, कुटी, आकाश, पृथ्वी। जीव को नियम से उत्पन्न होने वाला, पर्वतों में उत्पन्न होने वाला और मर्यादाशील और हंस इत्यादि कहा गया है। यहाँ जीव को हंस दो दृष्टियों से कहा गया है।

१. जीव भी हंस की तरह एक जगह से दूसरी जगह जाया करता है। हंस जिस प्रकार दुग्धमिश्रित जल से दुग्ध पृथक् कर दिया करता है उसी प्रकार जीव भी प्रकृति रूपी जल से ब्रह्म रूपी दुग्ध को पृथक् करके हंस ही नहीं किन्तु परमहंस कहलायाकरता है।

२. जीव प्राण और अपान से काम लेता हुआ शरीर के मध्य में रहता है। सम्पूर्ण इन्द्रियाँ उसकी आज्ञाओं का पालन करती हैं।

३. जीव के शरीर छोड़ देने के बाद वह शरीर निकम्मा रह जाता है।

४. शरीर में जीव आश्रित प्राण और अपान रहते हैं और शरीर में जीव के रहने से ही उनका तथा अन्य इन्द्रियों का जीवन रहता है। प्राण ऊपर खींचने को कहते हैं, अपान नीचे फेंकने को कहते हैं। उपदेश यह है कि प्राणायाम अवश्य करना चाहिए। आज के उन्नत व्यायामों के साथ यदि प्राणायाम किया जाय तो मनुष्य सुखी रह सकता है।

प्राणायाम

प्राणायाम से फेफड़े ठीक ठीक काम करते हैं। रक्त शुद्ध रहता है और कोई रक्त विकार नहीं होता। खारिश, कुष्ठादि रोग नहीं होते।

हार्टफेल

हार्ट फेल का कारण हृदय की कमजोरी है। डर से हृदय कमजोर होता है। डर पाप से पैदा होता है। संसार का यह अटल नियम है। पश्चिमी सभ्यता बतलाती है कि पाप करना बुरा नहीं, परन्तु पाप ऐसे करो जो प्रकट न हों। कितने दुःख की बात है।

एक उदाहरण

गवर्नमेन्ट आफ़ इन्डिया के होम मेम्बर जो पीछे से यू० पी० के गवर्नर हो गए थे हार्टफेल होने से मरे। कहा जाता है कि वे अविवाहित थे। नैनीताल में उनकी मृत्यु पर शोक सभा हुई, उनके साथी एक बंगाली मिनिस्टर थे, उन्होंने बोलते हुए कहा—"उन्हें कोई याद रक्खे या न रक्खे परन्तु शिमले की मिसें हमेशा याद रक्खेंगी।" इस कथन का भाव अपने में स्वयं स्पष्ट है। प्राणायाम से और निष्पाप वृत्ति से हृदय पुष्ट होता है, ऐसा करने से हार्टफेल कभी नहीं होता।

शव

आत्मा के शरीर से निकल जाने और कुछ बाकी न रह जाने का अभिप्राय यह है कि वह शरीर नहीं रहता वरन् शव हो जाता है, और तब वह रुखसत करने योग्य हो जाता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पिता पुत्रादि का सम्बन्ध

पिता पुत्रादि का भाव न आत्मा में है और न शरीर में आत्मा और शरीर के मिले हुए संघात को हम पिता, पुत्र इत्यादि कहते हैं। ये सम्बन्ध तब तक रहते हैं जब तक यह संघात रहता है। यही इन सम्बन्धों की वास्तविकता है। जब मनुष्य इस वास्तविकता को समझ लेता है तब उसे मृत्यु विह्वल नहीं कर सकती। मनुष्य न प्राण से जिन्दा है, न अपान से। ज़िन्दा रहता है किसी दूसरी चीज से। उसी चीज के ये दोनों आश्रित हैं। है। आत्मा के शरीर के साथ रहने को जीवन और शरीर से वियोग को मृत्यु कहते हैं।

ईश्वर

जो सोते हुए मनुष्य के भीतर जागा करता है, जो शरीर के भीतर काम किया करता हैं उसे ही ब्रह्म, शुक्र इत्यादि कहते हैं।

ब्रह्माण्ड में ईश्वर किस प्रकार रहता है ?

आत्मा के मौजूद रहने मात्र से जैसे शरीर का काम चला करता है उसी प्रकार ईश्वर के ब्रह्माण्ड में रहने मात्र से ही संसार का काम चला करता है और सैंकड़ों प्रकार की रचनाएँ होती रहती हैं। ईश्वर जगत् की, मनुष्य की उत्पत्ति का निमित्त कारण है। वह महान् हैं, जितने लोक हैं सब उसके आश्रित हैं। जिस प्रकार अग्नि एक भूत है और जिस वस्तु के भीतर होती है उसी तरह नजर आने लगती है इसी तरह से ईश्वर जगत् में अपनी व्यापकता से जिस जिस वस्तु के तुल्य रूप वाला होता है परन्तु उस वस्तु से वह सदैव पृथक् रहता है जैसे कमल जल से। न ईश्वर उसमें लिप्त होता है, न वह वस्तु ईश्वर में लिप्त हो सकती है। उस लिप्त होने की बात को स्पष्ट करने के लिए एक और उपमा दी गई है। आँखों में देखने की योग्यता सूर्य से आती है, इसी लिए कहा गया है कि समस्त लोक का चक्षु होते हुए भी जिस प्रकार सूर्य आँखों के बाह्य विकार से पृथक् रहता है उसी प्रकार जगत् पिता ईश्वर संसार की बुरी से बुरी वस्तु में व्याप्त होते हुए भी उसके समस्त विकारों से अलग रहता है।

उपदेश

ईश्वर को सदा ऐसा समझना चाहिए कि वह सब जगह में मौजूद है। अगर हम ऐसा समझ लें तो पाप करने के लिए कोई जगह न मिलेगी और हम पापों से बच जाएँगे। नास्तिकतासे ही पाप होते हैं। जो लोग ईश्वर से मुख मोड़ते हैं वे पाप से रिश्ता जोड़ते हैं। पुनः मनुष्य इन उपायों द्वारा तभी फायदा उठा सकता है जब वह ईश्वर की ओर चलता है।

● स्वामी श्रद्धानंद ही थे जिन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा की असली कीमत को पहचाना और इसलिए उन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य ऐसी शिक्षा पद्धति का निर्माण करना ही बनाया जिससे गुलाम और डरपोक पैदा न होकर देश के नवयुवक वीर निडर और राष्ट्र भक्त पैदा हों।

—डा० धीरेन्द्र विद्यालंकार
पी. एच. डी. प्रोफेसर म्युनिच यूनिवर्सिटी जर्मनी

● बंगाल के नवयुवकों में आर्य समाज के आदेशों और कार्य प्रणाली के प्रति आदर का भाव उत्पन्न करने में स्वामी जी का महान् योग था। बंगाल की जनता के मन में स्वामी जी भारत के एक आदरणीय व्यक्ति के रूप में सदैव अंकित रहेंगे।

—प्रो. विनयकुमार कलकत्ता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

४

कथा सार

सुख प्राप्ति की अभिलाषा सभी को होती है परन्तु उनमें कितने मनुष्य उसके वास्तविक रूप को जानते हैं ?

सुख, दुःख, पाप और पुण्य का वास्तविक रूप, सुख के भेद, सुखी रहने के उपाय, शान्ति और सुख का भेद, नियम पालन का महत्व, इन्द्रियों का पृथकत्व अन्तर्मुखी तथा बहिर्मुखी वृत्तियां तथा उनका आवागमन के बन्धन से सम्बन्ध, चित्त की वासनाओं का त्याग आदि विषय इस कथा में विस्तार से समझाये गये हैं।

बहनो और भाइयो !

कल आप लोगों को जीव का स्वरूप बतलाने के बाद ईश्वर-विषय का आरम्भ किया गया था और यह बतलाया गया था कि ईश्वर किस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड और प्राणीमात्र में परिपूर्ण है और किस प्रकार वह प्रकृति और मनुष्य के विकारों और गलाजत से पृथक् रहता है।

सुखी रहने के उपाय

आगे बतलाया गया है कि ईश्वर एक है, वह सब को वश में रखने वाला है, सब भूतों का आत्मा है, सब की हस्ती उसकी सत्ता की वजह से है। एक रस रहने वाली प्रकृति को वह बहुत रूपों में कर देता है। सूर्य, पहाड़, चाँद प्रकृति के विकार हैं, ये सब ईश्वर की रचना से बनते हैं। उसका ईश्वरत्व यही है कि वह एक चीज को अनेक चीजों में परिणत कर दे। जब मनुष्य उसे अपने भीतर देखता है तब मनुष्य को सुख प्राप्त होता है।

सुख के भेद

सुख दो प्रकार का होता है। पहला सुख वह है जो संसार की वस्तुओं से—प्राकृतिक वस्तुओं से—मिला करता है। दूसरा सुख आनन्द कहलाता है। जब आत्मा अपने भीतर कार्य करता है उस समय जो सुख प्राप्त होता है वह आनन्द कहलाता है। प्राकृतिक सुख द्वन्द्व हैं। जहाँ भूख है वहाँ दुःख हैं। आनन्द निर्द्वन्द्व है, इसमें किसी दूसरे प्रकार की बात नहीं है। यह आनन्द आत्मा के कर्तृत्व से ही प्राप्त होता है। मन, बुद्धि और इन्द्रियों से नहीं प्राप्त होता।

सुख-दुःख पाप-पुण्य क्या है ?

उपनिषद् और वेदों ने सुख दुःख इत्यादि की व्याख्या को बहुत सरल बना दिया

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है। संस्कृत की विशेषता उसके शब्दों में निहित है। संस्कृत के सुख शब्द के अर्थ और सुख के साधन के लिए इस शब्द से बाहर जाने की आवश्यकता नहीं। सुख "दो शब्द सु+ख से मिल कर बना है।" सु=अच्छा+ख इन्द्रिय अर्थात् सुख नाम ही अच्छी इन्द्रियों का है। इसी प्रकार दुःख (दु=बुरी+ख=इन्द्रिय) बुरी इन्द्रियों को कहते हैं। आवश्यक है कि सुखी बनने के लिए अपनी इन्द्रियों को अच्छा बनाया जाय। संसार के सुख क्षणिक होते हैं। उदाहरण के लिए शक्कर को जबान पर रक्खो। तुम प्रसन्न होओगे। इच्छा होगी कि शक्कर का स्वाद हमेशा आता रहे पर असल में जबान पर रखते ही स्वाद आयेगा बाद में कितनी ही देर उसे रक्खे रहो उसमें वह स्वाद नहीं आएगा जो रखते समय आया था अर्थात् वह स्वाद क्षणिक ही है। यही बात सांसारिक अन्य सुखों के सम्बन्ध में जानो।

इन्द्रियों का सुख उनके अच्छे बने रहने में ही है, परन्तु आनन्द के सम्बन्ध में यह बात नहीं। यह आनन्द आत्मा से सम्बन्धित है और चिरकाल तक रहने वाला है। जो आत्मस्थ होकर ईश्वर का चिन्तन करते हैं उन्हें ही यह मिलता है। आगे कहा गया है कि ईश्वर नित्यों में नित्य है उसमें शंकराचार्य ने पदच्छेद करते हुए "नित्यो-नित्यानम्" अर्थात् अनित्यों में नित्य है कहा है परन्तु इस प्रकार की बात नहीं है। उपनिषद् में बतलाया गया है कि ईश्वर के अतिरिक्त और भी चीजें नित्य हैं तथा जीव और प्रकृति। वह चेतनों में मुख्य रीति से चेतन है, बहुतों में एक है। जो जीवों के प्रति कर्मफलों को देता है उस परमात्मा को जो धीर मनुष्य आत्मस्थ होकर देखते हैं उनको बहुत काल तक रहने वाली शान्ति प्राप्त होती है।

शान्ति और सुख का भेद

शान्ति में हमारे से कुछ जाया करता है और सुख में कुछ आया करता है। उदाहरण के तौर पर जैसे बुखार के उतरने पर तकलीफ चली जाती है और शान्ति प्राप्त हो जाती है परन्तु ईश्वर-मार्ग के पथिकों को सुख और शान्ति दोनों प्राप्त हुआ करती हैं। जब तक मनुष्य ईश्वर की ओर चलने का यत्न नहीं करता तब तक उसे सुख और शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। ईश्वर की तरफ चलने की योग्यता तभी आती है जब हम प्रतिदिन के व्यवहार में सच्चाई लावें।

ईश्वर और आत्मा का प्रकाश

आगे ईश्वर का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जहाँ ब्रह्म का साक्षात् हुआ करता है वहाँ सूर्य चन्द्र अग्नि तारों का प्रकाश निष्फल है। कुछ काम नहीं दे सकता। इसलिए इनमें से किसी के प्रकाश में ईश्वर को देखने की इच्छा करना व्यर्थ है। तात्पर्य यह है कि उसी के प्रकाशित होने और उसी के दिए हुए प्रकाश से यह सूर्यादि प्रकाशित हुआ करते हैं। फिर उसी के दिए थोड़े प्रकाश से इस प्रकार उस महान् विलक्षण ज्योति पुञ्ज को कोई कैसे देख सकता है? जैसे आत्मा के प्रकाश से मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ काम देने लगती हैं वैसे ही ईश्वर के प्रकाश से सूर्य चन्द्रादि काम देने लगते हैं। यह आस्तिक बुद्धि मनुष्य के भीतर होनी चाहिए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वृक्ष शरीर

आगे कहा कि मनुष्य का शरीर वृक्ष के सदृश है। यह शरीर वृक्ष तो है किन्तु अलौकिक है। वृक्षों की जड़ नीचे होती हैं किन्तु शरीर रूपी वृक्ष की जड़ ऊपर होती है अर्थात् मनुष्य के शरीर में शिर जड़ स्थानीय है और हाथ पाँव आदि शाखाओं के सदृश है। अर्थात् वृक्षों से मनुष्य शरीर की बनावट इस अंश में सर्वथा विपरीत है। यह वृक्ष थोड़े अरसे तक रहने वाला है और नित्य भी है। ये दोनों बातें इसलिए हैं कि वर्तमान मानव-शरीर तो बहुत थोड़ी देर तक रहने वाला है परन्तु मनुष्य योनि जो सृष्टि काल में बराबर बनी रहती है और प्रलय के बाद फिर प्रकट हो जाती है नित्य है। इसी का नाम प्रवाह से नित्य होना है। जिस प्रभु ने ऐसे शरीर को रचा वह उसका निमित्त कारण है। वह महान् है, अमृत है। उसी में सब लोक ठहरे हैं। कोई भी उसके नियम को नहीं तोड़ सकता, आगे कहा है। संसार में हमें जो कुछ दिखाई देता है वह सब परमात्मा में गतिमान् है, सारा ब्रह्माण्ड ईश्वर के भीतर है। यह ब्रह्म हाथ में वज्र लिए के सदृश महान् भय वाला है। सबको नियम में चलाता है। सूरज, चाँद, सितारे सब उसी के भय से अपना काम कर रहे हैं। इस जगत् के प्रत्येक कार्य में जो नियम पाया जाता है वह नियम ईश्वर का दिया हुआ है। हाथ में वज्र लिए हुए है, इसका स्पष्टीकरण यह है कि नियमों का ठीक-ठीक पालन भय से ही हुआ करता है। संस्कृत की एक आख्यायिका है कि जब संसार में मत्स्य न्याय जारी हुआ तब त्याग की सृष्टि हुई। मत्स्य न्याय का अभिप्राय निर्बलों की सबलों से रक्षा ही है। जिस प्रकार न्यायी राजा के राज्य में शान्ति कायम रहती है और सब प्रजा अपने धर्मों का यथा विधि पालन करती है इसी प्रकार ब्रह्माण्ड का राजा ईश्वर वज्र हाथ में लिए खड़ा रहता है। सब पर न्याय करते हुए, सूर्य, वायु, चन्द्र और मृत्यु इत्यादि से ठीक-ठीक कार्य करा रहा है।

नियम पालन का उदाहरण

जब अफ्रीका के बोर लोगों से इंगलैण्ड का युद्ध हुआ था तब बोरों ने शुरू में अंग्रेजों को हराया। अंग्रेजों के सेनापति ने हार होते देख कर एक चाल चली। वह चाल कैम्पों में रात को रोशनी कतई बन्द कर देने की थी। एक सेनापति को दूसरे दिन लड़ना था। उसकी एक बहन थी। उसने युद्ध में जाने के पूर्व अपनी बहन को रात में एक चिट्ठी लिखने का इरादा किया। उसने एक डेरे में पर्दे के भीतर जाकर लैम्प जलाया। प्रधान सेनापति को इसकी खबर लगी। वह फौरन आया और लैम्प जलाने का कारण पूछा। सेनापति ने सब हाल सच सच बयान कर दिया। प्रधान सेनापति ने पूछा, 'क्या तुमने चिट्ठी खत्म कर दी' सेनापति ने कहा 'हाँ'। प्रधान सेनापति ने कहा 'इस चिट्ठी में यह भी लिख दो कि यह मेरी अन्तिम चिट्ठी है।' यह कह कर प्रधान सेनापति ने नियम भंग के अपराध में सेनापति को गोली से उड़ा दिया। इसका अभिप्राय यही है कि नियमों का पालन ढीलेपन से नहीं कराया जा सकता। नियम भंग कभी नहीं करना चाहिए। जब मनुष्य इस मर्यादा को समझ कर उसे अपने जीवन में धारण कर लेता है तब ही उसका कल्याण होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन्द्रियों का पृथकत्व

आगे कहा है कि पृथक् पृथक् उत्पन्न हुए इन्द्रियों के पृथक् भाव को और जो उनके उदय और अस्त हैं उनको जानकर ज्ञानवान् पुरुष—शक नहीं कर सकता। जो आदमी आत्मा से इन्द्रियों के पृथकत्व और इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त हुए सुख के क्षणिक होने के तथ्य को समझ लेता है वह दुःखों से मुक्त हो जाया करता है। तात्पर्य यह है कि जब मनुष्य को आत्मा और इन्द्रियों का निश्चयात्मक ज्ञान हो जाता है तब शरीर की तकलीफ से उसे तकलीफ अनुभव नहीं हुआ करतीं। कल्पना करो कि आप के शरीर के किसी अंग में पीड़ा है, आप यदि उससे अपना ध्यान हटा कर दूसरी जगह ले जायेंगे तो निश्चय ही आप उस दुःख को दुःख नहीं समझेंगे।

बहिर्मुखी तथा अन्तर्मुखी वृत्ति

जब तक मनुष्य की बहिर्मुखी वृत्ति रहती है तब तक वह आवागमन के बन्धन से नहीं छूटा करता है। जब अन्तर्मुखी वृत्ति से आत्मा और परमात्मा का साक्षात् कर लिया करता है तब आवागमन के बन्धन से छूटकर मनुष्य मुक्त हो जाया करता है।

चित्त की वासनाएँ

'जब चित्त के सहारे रहने वाली वासनाएँ नष्ट हो जाती हैं तब वासनाओं के मरने पर मनुष्य अमर पद प्राप्त किया करता है। यहाँ तक उपदेश की बातें थीं। आगे आचरण की बात है। अमल द्वारा ही मनुष्य इन उपदेशों से फायदा उठा सकता है अन्यथा नहीं। इसके लिए विशेषज्ञों का आश्रय लेना चाहिए। इसे शास्त्र नहीं बतला सकते।

कठ उपनिषद् की समाप्ति

अन्त में यह बतलाया गया है कि जीवन मुक्त मनुष्य का आत्मा इस शरीर से किस प्रकार निकलता है :—

हमारे शरीर में एक सौ एक मुख्य नाड़ियाँ हैं। उसमें से एक नाड़ी चोटी में निकलती है। मनुष्य का प्राण किसी न किसी मार्ग से आँख कान इत्यादि से निकलता है। जब तक इन मार्गों से निकलता रहता है तब तक आवागमन से नहीं छूटा करता। जब चोटी की नाड़ी से, जिसे सुषुम्ना कहते हैं, निकलता है तब आवागमन के बन्धन से छूट जाता है।

सार

सार यह है कि मनुष्य जब तक आवागमन के बन्धन में रहता है तब तक वह प्राणों के जरिये से एक जेलखाने (योनि) से निकाल कर दूसरे में भेज दिया जाता है। जब स्वतन्त्र होता है, निष्पाप होता है और प्रकृति का इसे बन्धन नहीं होता तब वह स्वतन्त्र प्रवृत्या निकल कर परम गति को प्राप्त कर लिया करता है।

यम के उपदेश के सम्बन्ध में अन्तिम बात

अन्त में कहा गया है कि यम के उपदेश को नचिकेता ने ग्रहण करके और उसके अनुकूल आचरण कर निष्पाप होकर ईश्वर को प्राप्त किया। अन्य नर नारी भी जो इस उपदेश के अनुकूल आचरण करेंगे निष्पाप होकर ईश्वर को प्राप्त कर सकेंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिक्षा

मनुष्य को यत्न कर के अपने लोक और परलोक को सुधारना चाहिये और इसके लिये उसका जीवन ऐसा होना चाहिये कि वह अन्तिम ध्येय की ओर मनुष्य को ले जाने वाला हो। ध्येय ईश्वर प्राप्ति का रहना चाहिये। उसके प्रत्येक काम इसी ध्येय से शासित होने चाहिएँ। जब ऐसा होने लगता है तब ही वह अन्तिम ध्येय को पहुँचता है। इस शिक्षा का मतलब यह नहीं कि सांसारिक कार्यों को छोड़ दो या उनसे उपराम हो जाओ। सांसारिक काम करो अवश्य, परन्तु मर्यादा के साथ और अपने ध्येय को सामने रखते हुए आत्मनिरीक्षण के द्वारा उस ध्येय के अधिकाधिक निकट पहुँचने का यत्न करो।

ईशोपनिषद् कथा

कथा सार

इस कथा में, पाँच कर्त्तव्य जिनसे ब्रह्म में प्रवेश का अधिकार मिलता है, ब्रह्मविद्या क्या है ? अनासक्ति की महत्ता; सांसारिक वस्तुओं में केवल प्रयोगाधिकार समझने में मृत्यु के वास्तविक रूप के समझने से क्या सम्बन्ध है ? कर्मशील बनने से ही पूर्णायु प्राप्त हो सकती है, सकाम और निष्काम कर्म क्या है ? मनुष्य आत्मा के अनुकूल कार्य कर के ही आत्म-जगत् में प्रविष्ट हो सकता है आदि विषयों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

बहनो और भाइयो !

जैसी कि कल सूचना दी गई थी, आज ईशोपनिषद् की कथा शुरू की जाती है। ईशोपनिषद् यजुर्वेद का चालीसवाँ अध्याय है। इस उपनिषद में जो शिक्षाएँ दी गई हैं उनको वेद अथवा उपनिषद की शिक्षा का सार कह सकते हैं। इस प्रकार उपनिषदों की शिक्षा वेद-मूलक है, यह स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है। इस उपनिषद् के तीन भाग हैं।

पहले भाग में शुरू के तीन मन्त्र हैं जिनमें पाँच कर्त्तव्यों का विधान किया गया है। उन कर्त्तव्यों को अमल में लाने से आदमी ब्रह्म में प्रवेश करने का अधिकार हासिल करता है।

दूसरे भाग में चार से आठवें मन्त्र तक हैं। इसमें ब्रह्म विद्या का वर्णन है और इन्हीं पाँच मन्त्रों में ब्रह्म विद्या के मुख्य-मुख्य सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है।

तीसरे भाग में मनुष्य के कर्तव्य का विधान किया गया है कि किस प्रकार ब्रह्म विद्या को प्राप्त करे। यह भाग नौ से सोलहवें मन्त्र तक पूरा हो जाता है। १७वें मन्त्र तक महत्व पूर्ण परीक्षा की बात कही गई है और आखिरी मन्त्र में प्रभु से सफलता की प्रार्थना की गई है। इसी प्रार्थना के साथ उपनिषद् समाप्त हो जाती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाँच कर्त्तव्य

१—ईश्वर को प्रत्येक स्थान में मौजूद समझना।

२—संसार की तमाम चीजों को भोगते हुए यह भाव रखना कि ये सब वस्तुएँ ईश्वर की हैं। भोक्ता का इनमें केवल प्रयोग का अधिकार है।

३—किसी का धन या अधिकार न लेना।

४—कर्त्तव्य समझ और फल की इच्छा से रहित सदैव पुरुषार्थ करना।

५—अन्तरात्मा के विरुद्ध आचरण न करना।

पहला कर्त्तव्य

यह सब जो कुछ पृथ्वी पर चराचर वस्तुएँ हैं वे ईश्वर से आच्छादित हैं। ईश्वर जगत् में आकाशवत् परिपूर्ण है। दुनियाँ की हर चीज आकाश में है और आकाश हर चीज में व्याप्त है। जगत् की प्रत्येक वस्तु में ईश्वर मौजूद है। ब्रह्म विद्या के जिज्ञासु को इस बात की महत्ता भली भाँति समझ लेनी चाहिए।

महत्ता

मनुष्यों को बुराइयों और पाप से अपने को तथा दूसरों को बचाना जरूरी है। यदि मनुष्य आस्तिकता से परिपूर्ण हो और ईश्वर को हर जगह व्याप्त समझे और यह समझे कि उसके हर एक अच्छे और बुरे काम को ईश्वर देखता रहता है तब उसे कहीं भी पाप या बुराई करने के लिए न जगह ही मिले और न साहस हो। नास्तिकता के वशीभूत होकर मनुष्य पाप करता है। मनुष्य जब अपने को पापों से बचाना चाहे तो जरूरी है उसके हृदय में ईश्वर की श्रद्धा हो।

दूसरा कर्त्तव्य

आगे कहा गया है कि 'उसी ईश्वर के दिए हुए पदार्थों का भोग कर, किसी के भी धन का लालच मत कर।'

उपनिषद् संसार के किसी भी भोग का निषेध नहीं करता। तुम धन का, दौलत का जिमीदारी का सब का भोग करो, परन्तु इनके प्रयोग में भावना यह होनी चाहिये कि यह ईश्वर की है और उसने हमें प्रयोग के लिए दी है। जब इस प्रकार का भाव आ जायेगा तब वह न अपने धन को अपना धन समझेगा और न अपने राज्य को अपना राज्य समझेगा अर्थात् उनसे ममत्व दूर होगा और उनको छोड़ते समय उसे दुःख नहीं होगा।

समझने योग्य बात

उपनिषद् की सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा मृत्यु के सम्बंध में है अर्थात् मृत्यु बहुत कष्ट प्रद नहीं बल्कि सुखप्रद है। मनुष्य का प्रातःकाल बाल्यावस्था में और अन्त बुढ़ापे में होता है। बुढ़ापे की अवस्था प्राप्त कर लेने पर मृत्यु रूपी रात्रि आती है। और वह उस वृद्ध आदमी को छोटे बालक के रूप में परिणत कर जाती है। मृत्यु आराम देने, बुढ़ापे रूपी थकान को दूर करने और मनुष्य को नये जन्म रूपी नई जिन्दगी, उत्साह और पुरुषार्थ देने वाली है तब फिर वह क्योंकर कष्टप्रद हो सकती है।

कृष्ण अर्जुन से कहते हैं—"मेरे और तुम्हारे बहुत से जन्म बीते हैं। मैं इस बात को जानता हूँ, तुम नहीं जानते। यह जन्म मरण रूपी चक्र अनादि काल से चला आया है और अनन्त काल तक जब तक मोक्ष नहीं मिलेगा-चलता ही रहेगा।" यह तो सिद्धांत की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बात है। परन्तु जब हम दुनियाँ के अमल को देखते हैं तब हम मृत्यु को बड़ा डरावना पाते हैं। उदाहरण के रूप में एक कोढ़ी को लीजिए जो बहुत ही पीड़ित है परन्तु फिर भी मौत के नाम और कल्पना से ही डर जाता है।

मृत्यु कष्टप्रद नहीं वरन् सुखप्रद है इसकी संगति कैसे हो? जब मनुष्य गम्भीरता पूर्वक विचार करता है तब उसे इन दोनों की संगति स्पष्ट दीख पड़ती है, एक साहूकार है। वह मरता है, उसकी धन-दौलत एक तरफ रह जाती है, और वह दूसरी तरफ चला जाता है। एक राजा है, वह बड़े और सम्भ्रांत राज्य का मालिक है, मृत्यु आती है, उसका राज्य एक तरफ चला जाता है और वह दूसरी तरफ चला जाता है। स्पष्ट है कि मृत्यु का काम मनुष्य को उन चीज़ों से जो प्राप्त हैं अलग कर देना ही है। जब मनुष्य अपनी चीज़ों से, स्वयं अपनी प्रसन्नता से अलग हो जाया करता है तब उसे दुःख नहीं होता और जब वह ज़बरदस्ती अलग किया जाता है तब दुःख होता है। प्रसन्नता से तभी अलग होता है जब वह उन चीज़ों को केवल अपने प्रयोग की वस्तु समझता है।

प्रसन्नता से तब नहीं छोड़ता जब उसमें उसकी ममता होती है या जिन्हें वह अपनी समझता है। यही बात ठीक मृत्यु और संसार की वस्तु और भोग के सम्बन्ध में हैं।

एक उदाहरण

एक हंसने वाला आईना होता है उसमें देखने पर आपको अपनी शक्ल बहुत खराब दीख पड़ेगी और दूसरे शीशे में अगर आप अपनी शक्ल देखेंगे तो खराब नहीं देख पड़ेगी। इसमें दोष किसका है? आईने का वा शक्ल का? दोष आईने का ही है! इसी तरह मौत तो अच्छी चीज है। जब हम उसे ममता के आईने में देखते हैं तब हमें मौत डरावनी देख पड़ती है परन्तु जब हम ममता से पृथक् करके देखते हैं तब हमें डरावनी नहीं मालूम पड़ती।

इंगलैंड के एक डाक्टर का परीक्षण

इंग्लैंड के Hough Lons Dale Hands नामक एक डाक्टर ने परीक्षण किया कि मृत्यु दुःख देने वाली है या नहीं। उसकी उम्र ६३ वर्ष की थी। उसने परीक्षण के लिए जहर तैयार किया जिससे मृत्यु धीरे धीरे हो। उसने जहर पी लिया और परीक्षण करने लगा और परीक्षण को एक नोट-बुक में लिखने लगा। उसने नोटबुक में लिखा है :—

'Japs are right, Death is lovely. I feel fine and no dain'.

अर्थात् जापानी ठीक कहते हैं। मृत्यु प्यारी है। तात्पर्य्य यह है कि हम संसार की चीजों में अपना प्रयोगाधिकार समझ लेते हैं तब हमें मृत्यु दुखदायी होती है।

तीसरा कर्त्तव्य

आगे मन्त्र में यह बतलाया गया कि तुम दूसरे के धन को मत लो।

संसार के झगड़ों का कारण मुख्यतया संपत्ति और अधिकार हैं। इनके छीनने से शान्ति नहीं रहा करती। संसार की वर्तमान अशान्ति का कारण संपत्ति और अधिकार ही हैं। आत्म-चिन्तन के लिए शान्त वातावरण चाहिए। इसके लिए मनुष्य को यत्न करना चाहिए और अपने यत्नों का मार्ग-प्रदर्शक यही शिक्षा रखनी चाहिए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चौथा कर्तव्य

आगे दूसरे मन्त्र में बतलाया गया कि 'यहाँ कर्मों को करता हुआ ही सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे। इस प्रकार तुझ मनुष्य में कर्म नहीं लिप्त होता इस से भिन्न कोई मार्ग नहीं हैं।"

आशय यह है कि आलसी बनकर तुम पूर्ण आयु भोग नहीं कर सकते। तमोगुण की वृद्धि से चर्बी बढ़ जाया करती हैं। इससे नपुंसकता पैदा होती है। नपुंसकता आयु कम कर देती है और मृत्यु हो जाया करती है। इसलिए उपनिषदों ने कहा पुरुषार्थमय जीवन व्यतीत करना चाहिए। कर्म करते हुए जीना चाहिए परन्तु वे कर्म बन्धन के हेतु न हों।

कर्म शील बनने के लिए हमें संसार की प्रत्येक चीज से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। संसार की कोई भी चीज ठहरी हुई नहीं। संसार को संसार इसीलिए कहते हैं कि वह गतिमय है। सूर्य चन्द्र सितारे पृथ्वी इत्यादि गरज कि परमाणुमात्र गतिमय हैं। परमाणुओं से अणु बनते हैं अणु से चीज़ें बनती हैं। अणुओं में भी कम्पन vibration मौजूद हैं। जब तक ये अणु हिलते रहते हैं तब तक ही कोई चीज़ बनी रहती है। यदि यह ठहर जाएं तो संसार में कोई भी चीज़ बनी नहीं रहती। जब संसार में कोई भी चीज़ ठहरी हुई नहीं है और सब चीज़ें गतिमान हैं, कर्ममय हैं तब मनुष्य कैसे कर्म करने से बच सकता है? इसलिए मनुष्य को भी कर्मनिष्ठ होना चाहिए। जिन व्यक्तियों वा जातियों ने इस सिद्धान्त की अवहेलना की और वे पुरुषार्थ हीन हुए उनका नाम भी दुनियाँ से उठ गया। आज पुराने मिश्र के लोग कहाँ हैं? यूनान के लोग कहाँ हैं? आज रोम जैसा विशाल साम्राज्य कहाँ है?

'कर्म बन्धन मय न हो' इस पर विचार करने पर मालूम होगा कि कर्म दो प्रकार के हैं—

(१) सकाम कर्म

(२) निष्काम कर्म

सकाम और निष्काम कर्म का भेद निम्न उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है। कल्पना करो कि तुम्हारे पड़ोसी के घर में आग लगी है। तुम आग बुझाने के लिये जाते हो। जाते समय तुम्हारे मन में दो भाव हो सकते हैं एक भाव यह कि जब कभी तुम्हारे ऊपर आपत्ति आवेगी तो वह पड़ोसी तुम्हारी मदद करेगा। दूसरा कर्त्तव्य समझ कर दुख दूर करने का।

पहला भाव ऊंचा नहीं और दूसरा ऊंचा है। यही भेद सकाम और निष्काम कर्मों का है। जो काम कर्त्तव्य समझकर फल की इच्छा न रखते हुए किए जाते हैं वे निष्काम कर्म और जो कर्म इच्छा वा वासना से युक्त होकर किए जाते हैं वे सकाम कर्म कहलाते हैं। फल की इच्छा के कर्म बन्धन का हेतु होते हैं किन्तु निष्काम कर्म नहीं। फल दोनों प्रकार के कर्मों का मिलता है। उपनिषद् मनुष्यों का कर्त्तव्य ठहराता है कि कर्म करते हुए भी संसार चक्र में न फँसे। संसार चक्र में फंसे हुए प्राणी इस चक्र से तभी निकल सकते हैं जब वे सकामता को निष्कामता में परिवर्तित कर देवें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पांचवां कर्त्तव्य

" जो कोई आत्मा के घातक मनुष्य हैं वे मर कर गहरे अंधेरे से आच्छादित हुए लोकों (योनियों) को प्राप्त होते हैं।

आत्म-हनन का यहां अर्थ आत्मा का कत्ल करना नहीं है वरन् आत्मा के विरुद्ध आचरण करना है। कल्पना करो कि हमारे समाज में नन्हीं २ वा उनसे कुछ बड़ी असंख्य विधवाएं हैं जिन्हें मुशिकल से 'विधवा' शब्द से सम्बोधित किया जा सकता है। कोई मनुष्य आत्मा की प्रेरणा पर उन्हें विधवा स्वीकार नहीं करता है और कहता है उनकी शादी होनी चाहिए। जब वह बिरादरी के पंचों को किसी ऐसी सभा में देखता है तो उनके भय से सम्मति दे दे देता है कि नहीं होनी चाहिए। इसी को आत्मा का हनन कहते है। ऐसा कभी नहीं होनी चाहिए। आत्मा का हनन करने वाले लोगों की सम्मति का कोई मूल्य नहीं होता और न संसार ऐसे लोगों की सम्मतियों का आदर ही करता है। न ऐसे लोगों का कोई मान ही होता है। जब तुम कोई काम करना चाहो तब अपनी आत्मा से सलाह लो। यदि आत्मा में उस काम के लिए उत्साह हो तो करो। यदि भय हो तो मत करो। अच्छे कामों के करने में उत्साह और खुशी होती है, बुरे कामों के करने में भय, शर्म और शंका होती है। आत्मा की प्रेरणा से अच्छा चरित्र बना करता है और उसके विरुद्ध आचरण करने से बुरा चरित्र बना करता है। तात्पर्य यह है कि आत्मा के अनुकूल ही कार्य करने से हम चरित्र बनाते हुए आत्मा-जगत् में प्रवेश का अधिकार प्राप्त करते हैं। पश्चिम के विचारकों ने भी उपनिषद् की इस शिक्षा की सच्चाई को स्वीकार किया है। प्रसिद्ध विद्वान् मारले ने एक पुस्तक राजीनामा (Compromise) नामक लिखी है। उसमें विचार किया गया हैं कि किन दशाओं में राजी नामा हो सकता है। उसने जो सम्मति प्रकट की हैं वे ये हैं :—

(१) सम्मति का स्थिर करना

(२) सम्मति का प्रगट करना

(३) सम्मति को क्रिया में लाना

मारले ने कहा कि सम्मति के स्थिर करने में राजी नामा नहीं हो सकता। सम्मति के प्रकट करने में कुछ राजीनामा हो सकता है जैसा कि मनु ने कहा है।

"सत्य बोलो, प्रिय सत्य बोलो, अप्रिय सत्य मजबूरी के सिबा मत बोलो।" तात्पर्य यह है कि जिस सम्मति प्रगट करने पर बुरा परिणाम निकालने की सम्भावना हो वह सम्मति के प्रकट न की जाय। पूरा पूरा राजीनामा सम्मति के अमल में लाने में हुआ करता है। अर्थात् अल्प पक्ष की सम्मति की उपेक्षा करके बहु पक्ष के मतानुकूल कार्य किया जाय। मतलब यह है कि सम्मति के स्थिर करने में कभी भी कोई भी राजीनामा नहीं हो सकता। आत्मा की प्रेरणानुसार किसी विचार के स्थिर करने को ही सम्मति कहते हैं।

एक ठग का उदाहरण

मध्य प्रदेश में ठग प्रथा जारी थी। सरकार ने इस प्रथा का दमन कर दिया है। अमीर अली और तांतिया नामक दो ठग बड़े प्रसिद्ध थे। अमीर अली के माता पिता उसके बचपन में ही मर गये थे। वह एक ठग के हाथ पड़ गया था। ठग ने यह सोच कर कर कि वह अमीर अली को अपना उत्तराधिकारी बना देगा, उसका भली भांति पालन-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पोषण किया। अमीर के बड़े हो जाने पर उस ठग ने उस अमीर को ठग वृत्ति करने के लिए कहा। अमीर बड़ा सहृदय था, उसे इस वृत्ति से घृणा थी। उसने यह वृत्ति करने से इन्कार कर दिया। वह ठग बहुत यत्न करने पर अमीर को ठगी करने के लिए प्रेरित न कर सका और निराश हो गया। पश्चात् अमीर अली एक दूसरे ठग के अधिकार में रक्खा गया। वह दूसरा ठग चतुर था। उसने पहला काम जो किया वह अमीर की मनोवृत्ति का ठीक ठीक अध्ययन करना था। उसे मालूम हुआ कि अमीर का ध्यान वर्जिश (व्यायाम) की ओर है। उसने अमीर को व्यायाम सिखलाई और अन्त में अमीर की सहानुभूति उस ठग की ओर पूरी पूरी हो गई। जब उस ठग ने देख लिया कि मेरा रंग अमीर पर पूरा पूरा चढ़ गया है तब उसने अमीर को कहा कि एक ऐसी वर्जिश है कि एक रूमाल में कुछ बाँध कर मनुष्य के गले में दूर से फेंका जाय जिससे मनुष्य मर जावे। अमीर ने इस वर्जिश पर सन्देह किया। वस्तुतः यह घड़ी अमीर के लिए बड़ी बुरी थी। तभी तो कहा है कि जो घड़ी आए उसका उत्तमत्ता से प्रयोग करो। दुष्प्रयोग से न मालूम क्या अनिष्ट हो जाय। अमीर उस वर्जिश को प्रत्यक्ष देखने के लिए लालायित हो गया। उस ठग ने रूमाल बाँधकर गले में फेंकने से एक राहगीर को मारा। अमीर को फिर सन्देह हुआ। वस्तुतः यह घड़ी भी बड़ी दुर्भाग्य पूर्ण थी। सन्देह यह हुआ कि किस प्रकार कपड़े से आदमी मर सकता है। तब ठग ने अमीर को खुद आजमाने को कहा अमीर ने एक राहगीर को मार कर उसे आजमाया और सही पाया। फल यह हुआ कि उसके हृदय में वासना पैदा हुई और कुसंगति में पड़कर उसने उसकी सहृदयता को दबा दिया। बाद को अभ्यास करते २ वह पक्का ठग हो गया। जब आत्मा अपनी प्रवृत्तियों को कुसंगति वा प्रलोभनों में पड़ कर दबा दिया करता है, तब उसका पतन हो जाया करता है।

इस प्रकार उपनिषदों ने सब से पहली बात उपर्युक्त पाँच कर्तव्यों का अनुष्ठान बतलाया जिन के अमल से मनुष्य अपने को ब्रह्म विद्या के प्रवेश का अधिकारी बना लिया करता है और उसका संसार में इन नियमों से कल्याण हुआ करता है।

२

कथासार

ब्रह्मविद्या प्राप्ति का अधिकार, ईश्वर सूक्ष्मता, वेग्वत्ता तथा व्यापकता, प्रलय का रहस्य, ईश्वर के विषय में सिद्धान्त, उपासना क्यों करनी चाहिए ? उपासना का स्वरूप, ईश्वर की व्यापकता और विश्व-प्रेम का सम्बन्ध, योग, ध्यान, ध्याता, ध्येय, ईश्वर प्राप्ति के उपाय आदि का इस कथा में रोचक ढंग से वर्णन किया गया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बहनो और भाईयो !

जिन पाँच नियमों के अनुष्ठान से मनुष्य लोक और परलोक में उन्नति कर सकता है उनका वर्णन किया जा चुका है वे पांच कर्त्तव्य इस प्रकार हैं।

(१) ईश्वर सर्वत्र व्यापक है।

(२) संसार में जिन चीजों का तुम भोग करो उसमें केवल प्रयोगाधिकार समझ कर ही भोग करो।

(३) दूसरों के धन के अपहरण की चेष्टा मत करो।

(४) पुरुषार्थ मय जीवन व्यतीत करो परन्तु जो कर्म करो उसे कर्त्तव्य समझकर ही करो.

(५) अपनी आत्मा के अनुकूल काम करो।

इस उपनिषद् का दूसरा भाग ब्रह्म विद्या से सम्बन्धित है इन पांचों कर्त्तव्यों के अनुष्ठान से मनुष्य ब्रह्म विद्या में प्रवेश का अधिकार पा लेता है। जिस विद्या में ब्रह्म का वर्णन हो वह ब्रह्म विद्या कहलाती है। ब्रह्म का वर्णन उसके गुणों के द्वारा होता है और उसके गुण बहुत से हैं। उसके समस्त गुणों का ज्ञान किस प्रकार हो सकता है, यह सवाल जिज्ञासुओं को परेशान करता रहता है। ब्रह्म विद्या की प्राप्ति का उद्देश्य अपनी उन्नति करना और उन्नति करते करते ब्रह्म को प्राप्त कर लेना है। उपनिषदों में इन गुणों का अच्छा विधान मौजूद हैं। उपनिषदों ने ईश्वर के उन गुणों को जान लेने की शिक्षा दी है जिनसे ईश्वर के ईश्वरत्व का विवेक व ज्ञान प्राप्त होता है और जिनसे मनुष्य का कल्याण होता है।

ईशोपनिषद् के इस भाग में ईश्वर के इन्हीं गुणों पर विचार किया है। आगे कहा गया है "वह ब्रह्म एक रस, मन से अधिक वेग वाला, सब जगह पहले से पहुंचा हुआ है। उस ब्रह्म को इन्द्रियाँ प्राप्त नहीं कर सकतीं। वह अचल होने पर भी दौड़ते हुए अन्यों को उल्लंघन किए हुए है। उसके भीतर वायु जलों को मेघ इत्यादि के रूप में धारण करता है अर्थात् एक रस का अर्थ एक ही है। वह मन से अधिक वेग वाला है।" दुनिया की सब चीजों की नाप तोल हो सकती है परन्तु मन की चाल का अन्दाजा नहीं किया जा सकता वह मन जब कभी बड़ी तेजी से चल कर जहाँ पहुंचता है वहाँ ईश्वर पहले से ही मौजूद मिलता है। तात्पर्य यह है कि ईश्वर ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत है, उसे इन्द्रियां प्राप्त नहीं कर सकतीं।

हम दुनियां में किसी चीज को नहीं देखा करते हैं। हमें उस चीज के गुणों का ही प्रत्यक्ष हुआ करता है अर्थात् मनुष्य गुणों को देख सकता है, गुणी को नहीं। जब हम इन्द्रियों से प्राकृतिक वस्तुओं में भी गुणी को नहीं देख सकते तब हम उस अप्राकृतिक ईश्वर को इन्द्रियों से कैसे देख सकते हैं ? जैसे हम प्राकृतिक वस्तुओं में गुणों को देखकर गुणी को देखा और समझा करते हैं ठीक वैसे ही हम ईश्वर को उसके गुणों से देख सकते हैं। ईश्वर का एक खास गुण रचना है। हम उसकी रचना से उसे देख सकते हैं। आज हम आविष्कारों की चर्चा सुनते हैं, हम कहते हैं कि न्यूटन ने आकर्षण शक्ति को मालूम किया। आविष्कार का मतलब उस चीज का पता लगाना है जो जगत में मोजूद तो होती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है परन्तु हम उसे नहीं जान सकते। आविष्कार का अर्थ अपनी अनभिज्ञता की स्वीकृति है। मनुष्य रचना के द्वारा ईश्वर को किस प्रकार जान सकता है? मनुष्य कितनी ही तेज़ सवारी क्यों न बनाले और उस पर चढ़कर कहीं जाय तो उसे ईश्वर वहाँ पहले से ही मिलेगा। वह ठहरा हुआ ही सब दौड़ने वाली चीजों का उलंघन किये हुए है। उस ईश्वर के भीतर वायु जलों को धारण करता है। बादल वायु में ही रहता है, गरज कि ब्रह्माण्ड के सब काम ईश्वर के अन्तर्गत हैं।

आगे कहा गया है कि ब्रह्म गति देता है परन्तु स्वयं गति में नहीं आता। वह दूर है, वह समीप भी है, वह इस सबके अन्दर और बाहर भी है। ईश्वर का सृष्टि कर्त्तृत्व केवल इतने से ही प्रारम्भ होकर पूर्णता प्राप्त कर लेता है कि उस समय जब प्रलय के बाद जगत् उत्पन्न होता है और प्रकृति विकृत होना चाहती है तो उस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वह शान्त और स्वस्थ गति रहित प्रकृति में गति का सञ्चार करता है जिससे प्रकृति की शान्ति भंग होकर क्रमशः सूक्ष्म और स्थूल भूतों की उत्पत्ति होकर प्रलय सृष्टि में परिवर्तित हो जाती है। इस गति को विद्वानों ने भी स्वीकार किया है।

प्रलय का रहस्य

प्रकृति अपनी असली हालत में है। वह जड़ है। उसमें अपनी गति नहीं हैं, महाप्रलय हो चुकी है, सृष्टि की उत्पत्ति के लिये गति की जरूरत है, वह गति कहाँ से आए? नास्तिक वैज्ञानिक इसी प्रश्न से चकरा जाते हैं और उन्हें किसी सुपरनेचुरल फ़ोर्स व ईश्वर की सत्ता स्वीकार कर लेनी पड़ती है। गति देने के लिए गति देने वाले से अलग कुछ आकाश या जगह होनी चाहिए तभी वह गति दे सकता है। यहां यह शंका उत्पन्न होती है। परन्तु ईश्वर की गति के सम्बन्ध में यह बात नहीं है। ईश्वर को उस तरह की गति देने की जरूरत नहीं होती जैसी कि हम देते हैं। वह स्वभावतया गति देता है, इरादे से नहीं देता। मनुष्य के सब काम इरादे से होते हैं। उसकी स्वभावतः इच्छा हुई कि प्रलय समाप्त हो और सृष्टि उत्पन्न हो, इस स्वाभाविक इच्छा को ईक्षण कहते हैं—ईक्षण के अर्थ हैं इच्छा—हमारी इच्छाएँ अप्राप्त वस्तुओं की होती हैं। ईश्वर और मनुष्य की इच्छा में भेद दिखलाने के लिए ही इच्छा और ईक्षण शब्द रक्खे गए हैं। उसने इच्छा की और गति पैदा हुई। विज्ञान का भी यह नियम है कि गति से पहले इच्छा होती है। विधाता ने जर्रों से सब ब्रह्माण्ड भर रक्खा है। गति ने एक जर्रे को गति दी, दूसरे ने तीसरे को तीसरे ने चौथे को इसी प्रकार गति होती चली गई और ब्रह्माण्ड के जर्रों में आलमगीर हरकत पैदा हो गई। जब पहले ने अपनी जगह छोड़ी थी तो उसका स्थान खाली हो गया खाली जगह को ही आकाश कहते हैं। खाली जगह होने से वायु उत्पन्न हुआ और वायु आकाश में व्याप्त हो गया, वायु ने उस गति में वेग पैदा किया और वायु के जर्रों के साथ संघर्ष से आग पैदा हो गई। वायु और अग्नि से जल बन गया ऐसा जल नहीं जैसा कि हम पीते है वरन् हवा की शक्ल में वह जल पैदा हुआ। उस जल मिश्रित वायु ने प्रकृति के परमाणुओं को तर किया, गीले परमाणु आपस में मिले, उससे पृथ्वी बन गई अर्थात् ये पांच, आकाश,वायु, अग्नि,जल, पृथ्वी ईश्वर की गति मात्र से पैदा हो गए। पहले कुछ मूर्ख वैज्ञानिक इन भूतों को एलिमैन्ट्स कहा करते थे। यह उनकी भूल थी, जब उनको यह भूल मालूम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हुई तो वे इन्हें मैटर 'कम्बाइन्डस विद एनर्जी' कहने लगे। पाँचों भूत प्रकृति और ईश्वर प्रदत्त गति के संघात का ही नाम हैं। इन भूतों से जगत् बना सकता है। उपनिषद् कहता है कि वह ईश्वक ही गति देता है।

अरस्तू का सिद्धान्त

अरस्तू ने अपने दर्शन में ईश्वर की व्याख्या इन शब्दों में की है "The unmoved mover" अर्थात् वह गति देता है परन्तु स्वयं गति में नहीं आता। ये शब्द उपनिषद् के "तदैजति तन्नैजति" वाक्य का हूबहू तर्जुमा हैं।

वह हम से दूर है :—आसमान में दो प्रकार के तारे हैं, एक हिलते हुए हैं और दूसरे ठहरे हुए। हिलने वाले सब तारे सूर्य हैं, इन सूर्यों की गणना बड़े से बड़े ज्योतिषी भी ठीक ठीक नहीं कर सके हैं। फ्रांस के एक वैज्ञानिक ने बतलाया कि दो सूर्यों के बीच कम से कम २६०० शंख मीलों की दूरी है। इस प्रकार के असंख्य सूर्यों के प्रकाश में सहज ही जाना जा सकता है कि ब्रह्माण्ड कितना विस्तृत है और यह भी कि हम उसका अनुमान भी नहीं कर सकते हैं और यह ब्रह्माण्ड उसकी रचना का एक बहुत छोटा भाग है और ईश्वर के मुकाबिले में तुच्छ है। इन सब बातों से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि वह कितनी दूर है।

समीप भी है :—वह हृदय के भीतर मौजूद है, इससे यह अन्दाजा लगाया जा सकता है कि वह कितना पास है। वही सबके भीतर और बाहर है अर्थात् सब जगह मौजूद है।

वह ईश्वर सब जगह मौजूद है, जगत् का निमित्त कारण है, प्रकृति से जगत् को बनाता है, वह निश्चित रीति से निराकार है, शरीर के विकारों से रहित है, नाड़ी और नसों के बन्धन से पृथक् है ये तीन शब्द इसलिए कहे हैं कि जिससे तीनों शरीरों में ईश्वर में किसी भी शरीर की कल्पना न हो सके।

वह कवि है :—सूक्ष्म से सूक्ष्म चीज उसे प्रत्यक्ष है। वह मननशील है। हम अज्ञान की क्रियाएँ किया करते हैं, वह नहीं करता, वह स्वयंभू है क्योंकि मनुष्यों को और संसार को पैदा करता है परन्तु उसे कोई पैदा नहीं करता, वह प्रजा के लिए न्याय का विधान करता है।

इस मन्त्र में ईश्वर के कतिपय गुणों को इकट्ठा कर दिया है। उपासना क्यों करनी चाहिए ? अपनी उन्नति के लिए उसकी उपासना करते हैं। उसके गुणों को अपने सामने रख कर उन्हें अपने भीतर लाओ और अपना जीवन उन्नत करो यही उपासना का ठीक ठीक अर्थ है और इसी को उपासना का पहला अंग कहते हैं। उसके बाद देखना है कि मनोवृत्ति कैसी होनी चाहिए। उपासना का दूसरा और अन्तिम अंग ब्रह्म को हृदय में धारण कर लेना है। पहले अंग में जहाँ वाचक को समझते हुए हृदय में रखा जाता है वहाँ दूसरे अंग में हृदय को वाच्य का मन्दिर बनाना पड़ता है। ब्रह्म विद्या के पहले अंग की प्राप्ति के लिए उद्योग संध्या से शुरू किया जाता है और दूसरे अंग की पूर्ति अष्टांग योग के आखिरी अंगों से होती है। सन्ध्या से शारीरिक मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार की उन्नति हुआ करती है।

जो आदमी सब चीजों में ईश्वर को देखता है और ईश्वर को सब चीजों में देखता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है वह सबका प्यारा हो जाया करता है जब हम ऐसा समझ लें तब संसार के सब प्राणी ईश्वर के मन्दिर के रूप में दीख पड़ेंगे और यदि हम वास्तविक प्रेम करते हैं तो हम उसके मन्दिर का किस प्रकार अनिष्ट चिन्तन कर सकते हैं। इस बात के तत्व को समझने वाला किस प्रकार उस मन्दिर को नष्ट भ्रष्ट कर सकता वा उससे घृणा कर सकता है। फिर छुआ छूत के झगड़े किस प्रकार ठहर सकते हैं। उपर्युक्त वाक्य में विश्व-प्रेम का कितना सुन्दर पाठ सन्निहित है। जब हमारी वृत्ति विश्व-प्रेममय हो जाएगी तो सब हमें प्यार करेंगे और हम सब को प्यार करेंगे। वृन्दावन में मैंने देखा कि तीन चार लड़कों ने अपना एक एक मोर निश्चित कर रखा था। लड़के दाने ले जाते थे और अपने अपने मोर को खिला दिया करते थे, मोर भी बिना किसी भय व शङ्का के दाने खा जाया करते थे। यह बात इससे और भी सुस्पष्ट हो जाती है कि जहाँ पशु-पक्षियों का शिकार-वर्जित नहीं है वहाँ के पशु-पक्षी मनुष्य से सशङ्कित रहा करते हैं और उसकी आहट सुनते ही डर जाया करते हैं परन्तु जहाँ वर्जित हैं वहाँ शिकार के पशु-पक्षी स्वच्छन्द रीति से विचरण किया करते हैं और मनुष्य से प्रेम करते हैं। यह प्रेम और घृणा का कितना सुन्दर उदाहरण है। पशु-पक्षी तथा प्राणिमात्र से प्रेम करना, न कि घृणा, विश्व प्रेम की श्रेष्ठ मनोवृत्ति का द्योतक है। यह मनोवृत्ति ईश्वर को सब प्राणियों में देखने और सब प्राणियों को ईश्वर में देखने से ही विकसित हुआ करती है।

एकत्व

योग के सातवें अंग तक पहुँचने पर जिज्ञासु को तीन बातों का ध्यान रहता है। वे तीन बातें इस प्रकार हैं।

(१) ध्यान। (२) ध्याता। (३) ध्येय।

ध्यान की अवस्था में ध्यानावस्थित जिज्ञासु समझता है कि वह ध्याता है और किसी ध्येय की प्राप्ति के लिए ध्यान रूपी क्रियाएँ कर । जब ध्यान से ऊँची अवस्था में पहुँचता है तब ध्याता और ध्यान दोनों को भूल जाया करता है। तब ध्येय ही उसके सामने रह जाया करता है। प्रेम की ऊँची हालत वही है जब वह अपने प्यारे के ध्यान में अपने को भूल जाय। तब उसे हर जगह अपने प्यारे के ही दर्शन होते हैं। यहीं मनुष्य एकत्व देखता है और यहीं द्वैत और अद्वैत दोनों वाद मिलते हैं।

ध्यान

जब यह कहा जाता है कि निराकार ईश्वर का ध्यान करो तब लोग स्वाभाविक रीति से कहा करते हैं जिसकी कोई शक्ल नहीं, सूरत नहीं, रूप नहीं, भला फिर किस प्रकार कोई उसका ध्यान कर सकता है? ऐसे लोगों ने समझ लिया है कि हम किसी बाहरी रूप-रंगवाली वाली वस्तु को अपने ध्यान में लाया करते हैं परन्तु बात इसके सर्वथा विपरीत है। ध्यान उसे कहते हैं कि जो चीज तुम्हारे भीतर जमा है उसे निकाल कर फेंक दो। तब ही कपिल ने कहा है "कि मन के खाली (निर्विषय) कर देने को ध्यान कहते हैं।'

मन का खाली करना

मन को खाली करने का अभिप्राय यह है कि मन का इन्द्रियों से काम लेना—जिससे जागृत अवस्था बना करती है—छूट जावे तथा मन का अपने भीतर काम करना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भा— जिससे स्वप्नावस्था बनती है—बन्द हो जावे अर्थात् मनुष्य की जागृत अवस्था में ही सुषुप्ति की हालत हो जाने को मन का खाली हो जाना कहते हैं।

साधन

आत्मा की दो वृत्तियाँ होती हैं। एक बहिर्मुखी और दूसरी अन्तर्मुखी। जब आत्मा की बहिर्मुखी वृत्ति काम करती है तब अन्तर्मुखी काम नहीं करती है। जब अन्तर्मुखी काम करती है तब बहिर्मुखी वृत्ति काम नहीं करती। बहिर्मुखी वृत्ति को बन्द करना ही मन का निर्विषय करना है। इसके साधन ध्यान के अभ्यास हैं। मन के खाली हो जाने मात्र से आत्मा की अन्तर्मुखी वृत्ति खुद जारी हो जाया करती है। नहर रूपी बाह्यवृत्ति के बन्द होने से आत्मा रूपी नदी में अन्तर्मुखी वृत्ति रूप जल स्वयमेव बहने लगता है। मन का खाली करना उपासना का अन्तिम अंग है। यहाँ पहुँच कर जिज्ञासु को जो आनन्द प्राप्त होता है वह केवल अनुभव की चीज है। तर्क इत्यादि से नहीं जानी जा सकती। उपनिषद ने इसे निदिध्यासन कहा है। तात्पर्य यह है कि पहले अपने को जानो। जब जान लोगे तब परमात्मा की तलाश की जरूरत नहीं, वह स्वयं मिल जायगा। यही ईश्वरोपासना का अन्त है।

ईश्वर प्राप्ति का उपाय

ऋग्वेद में कहा है :—

'हे प्रकाश वाले प्रभु! यदि मैं तू हो जाऊँ, तू मैं हो जाय तब ही आपका आशीर्वाद सच्चा हो जाय।'

आशीर्वाद यह है कि अमरता प्राप्त करो। अमरता प्राप्त करने से मेरा और तेरापन सब दूर हो जाएगा। मेरे तेरे की जड़ में अहंकार है। अहंकार से ही जगत् पैदा हुआ है और इसी से ठहरा है। ईश्वर प्राप्ति पर लग जाने पर इसे छोड़ना पड़ता है। मनुष्य जब तक मन और बुद्धि के चक्र में रहता है तब तक अहंकार में ही रहा करता है इसी को बाहर की वृत्ति कहते हैं। जब इसके चक्र से निकल जाता है तब ही भीतर की ओर चला करता है और अमरता प्राप्त किया करता है। इसी सम्बन्ध में कबीर ने ठीक ही कहा है—

"भीतर के पट जब खुलें, बाहर के हों बन्द"

एक और कवि ने कहा है—

वे खुदी छा जाय, ऐसी दिल से मिट जाये खुदी।

उनके मिलने का तरीका अपने को खोजने में है। आगे कबीर ने कहा है—

'जब मैं था तब हर नहीं, जब हरि हैं तब मैं नायँ।
प्रेम गली अति साँकरी, जा में दो ना समायँ॥"

अर्थात् अपने को साथ लेकर चलोगे तब वह नहीं मिलेगा। जब अपने को छोड़कर प्रेममय होकर चलोगे तब वह मिल जाएगा।

रहस्य

उपासना का प्रारम्भ ईश्वर के गुणों के मनन और उनको जीवन में धारण और चरितार्थ करने से होता है। इसके लिए सन्ध्यादि का विधान है। उपासना का दूसरा अंग ध्यान से बहिर्मुखी वृत्ति का बन्द करना और अन्तर्मुखी वृत्ति का जागृत करना है और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अन्तर्मुखी वृत्ति से ईश्वर का साक्षात्कार करना है। यहाँ प्रश्न निराकार साकार का नहीं रहता है। दोनों वृत्तियों का ही है। यही निराकार प्रभु की उपासना का रहस्य है। इस उपनिषद को कण्ठ करके उपरान्त सन्ध्या योग से उपासना कर के उसकी उदात्त शिक्षाओं पर विचार और मनन करो वह हृदय पर छाप डालेगी और तुम्हें ऊँचा उठायेगी तथा अन्तिम ध्येय तक पहुँचाने में सहायक होगी।

३

कथा सार

इस कथा में विद्या, अविद्या, ज्ञान और कर्म के शास्त्रीय विवेचन तथा इनके विषय में आधुनिक पाश्चात्य जगत् के विचार, ज्ञान का क्षेत्र स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर की विवेचना, सत्य की महिमा, मृत्यु के समय क्या कहना चाहिए ? आदि विषयों पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया है।

बहनो और भाइयो !

आप पिछले दो दिनों में इस उपनिषद् के दो भाग सुन चुके हैं। आप को याद रहा होगा कि प्रथम भाग में वे पाँच बातें बतलाई गई थीं जिनके अनुकूल आचरण से मनुष्य लोक और परलोक में श्रेष्ठ बना करता है। इसके बाद कल आपके सामने ब्रह्मविद्या और ईश्वर-प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रारम्भिक और अन्तिम बातें रखी गई थीं आज ईश्वर-प्राप्ति के साधनों पर विचार किया जाएगा।

वेद में कहा गया है कि—'जो ज्ञान की उपेक्षा करके कार्य करते हैं वे गहरे अन्धकार में जाते हैं, जो कर्म की अवहेलना कर के ज्ञान में रमते हैं वे उससे भी अधिक अन्धकार में जाते हैं।'

ज्ञान का और ही फल कहते हैं और कर्म का और ही फल कहते हैं। ऐसा हम धीर पुरुषों के वचन सुनते हैं।

जो ज्ञान और कर्म इन दोनों को साथ साथ जानता है वह कर्म से मृत्यु को तैरकर ज्ञान से अमरता को प्राप्त करता है।

विद्या और अविद्या

यह यजुर्वेद के ४०वें अध्याय के मन्त्रों का सार है। इनका देवता आत्मा है अर्थात् इनमें जिस विषय का वर्णन किया गया है वह 'आत्मा' है। जब हम आत्मा के गुणों पर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विचार करते हैं तब हमें इसके स्वाभाविक गुण ज्ञान और प्रयत्न देख पड़ते हैं। विद्या ज्ञान को कहते हैं। अविद्या के दो अर्थ किये जाते हैं एक पारिभाषिक और दूसरा यौगिक। दर्शनों में प्रायः पारिभाषिक अर्थ 'मिथ्या ज्ञान' के किए जाते हैं परन्तु अविद्या के यौगिक अर्थ विद्या से भिन्न के हैं अर्थात् जो विद्या वा ज्ञान नहीं है। जो ज्ञान नहीं वह क्या है? इस प्रश्न का उत्तर इन मन्त्रों का देवता है। इन मन्त्रों का देवता आत्मा है। आत्मा के स्वाभाविक गुण ज्ञान और कर्म हैं। ज्ञान से भिन्न कर्म है इसलिए अविद्या का अर्थ कर्म ही है।

कर्म और ज्ञान पर विचार करने पर पता लगेगा कि जो व्यक्ति केवल कर्म को लेते हैं वे अन्धकार में रहते हैं और जो कर्म की उपेक्षा करके ज्ञान को लेते हैं वे उनसे भी ज्यादा अन्धकार में हैं। क्यों? कर्म का फल मिला करता है। ज्ञान का नहीं! इसके प्रकाश में जो केवल कर्म को लेते हैं उन्हें अच्छा बतलाया गया है परन्तु श्रेष्ठ नहीं। जो दोनों को साथ-साथ काम में लाते हैं वे कर्म के द्वारा मृत्यु से पार हो जाया करते हैं और ज्ञान से अमरता को प्राप्त कर लिया करते हैं। उपदेश यह है कि ज्ञान हासिल करो परन्तु आचरण भी उसी ज्ञान के अनुकूल करो। यही वैदिक धर्म है। तुम कहीं से भी ज्ञान हासिल क्यों न करो, परन्तु वह ज्ञान और उसके अनुसार कर्म मौत के बन्धनों को ढीले करने वाले ही हों। मनुष्य का यही मुख्यतम कर्त्तव्य कहा गया है।

पश्चिमी जगत्

पश्चिमी जगत् में दो नियम काम करते हैं। वे साइंस और आर्ट हैं। साइंस ज्ञान में और आर्ट कर्त्तव्य में सन्निहित है। कहा गया है Science consists in knowing and Art Consists in doing पश्चिम के देशों की तरक्की के मूल में ये ही दो बातें हैं। देखना यह है कि पश्चिम के ज्ञान और कर्म का आदर्श वैदिक ज्ञान और कर्म के आदर्श के सदृश है वा इन दोनों में कोई विभिन्नता है। वेद और उपनिषद् ने शिक्षा दी है कि ज्ञान और कर्म वे ही होने चाहिएं जो परतन्त्रता को दूर करने वाले हों, जिनसे मृत्यु के बन्धन ढीले हो जाएँ। परतन्त्रता दुःख है, स्वतन्त्रता सुख है। परतन्त्रता के वास्तविक अर्थ दूसरों की हकूमत नहीं हैं वरन् इन्द्रियों की दासता ही परतन्त्रता के वास्तविक अर्थ हैं। अपने भीतर स्वतन्त्र होने से ही स्वतन्त्रता मिला करती है। पूर्व के ज्ञान और कर्म का उद्देश्य यही है, आदर्श यही है। पश्चिम के ज्ञान और कर्म का उद्देश्य और और आदर्श यह नहीं है। साइंस मनुष्यों को कहाँ पहुँचाना चाहती है इसका पता नहीं है। पश्चिम के लोग तरक्की कर रहे हैं पर उद्देश्य का उन्हें पता नहीं। पश्चिमी साइंस जन-संहार में काम आ रही है। नाना प्रकार की जन-संहारिणी गैसें तैयार हो रही हैं। एक गैस इस प्रकार की तैयार की गई है कि यदि उसका दुनियाँ के सबसे बड़े नगर लण्डन पर प्रयोग किया जाय, यदि वह गैस तीन हवाई जहाजों पर छोड़ी जाय और वह लण्डन में श्वास लेने वाली वायु में मिल जाय तो तीन घण्टे में अस्सी लाख आबादी वाले लण्डन शहर की आबादी नष्ट हो जाय। जर्मनी के सात वैज्ञानिकों ने एक जहरीली गैस तैयार की। वे समझते थे कि यह गैस सबसे ज्यादा भयानक गैस है वे उसे स्टोर में भर रहे थे, किसी प्रकार उस गैस का कुछ भाग रसायन शाला की हवा में मिल गया। श्वास लेते ही वे सातों वैज्ञानिक वहीं मर गये। जिस गैस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को उन्होंने दूसरे हजारों आदमियों के संहार के निमित्त बनाया था उसी से स्वयं मर गए। कहने का मतलब यह है कि पश्चिम के ज्ञान और कर्म का कोई उद्देश्य नहीं है। वैदिक ज्ञान कर्म का उद्देश्य है। मनुष्य को ऐसे ही ज्ञान और कर्म का सहारा लेना चाहिए जिनका उद्देश्य हो। यही मनुष्य का मुख्य कर्म है।

ज्ञान का क्षेत्र

आगे ज्ञान के क्षेत्र के सम्बन्ध में वेद में बताया गया है कि—

"जो केवल असम्भूति (कारण शरीर) को सेवन करते हैं वे गहरे अन्धकार में हैं और जो केवल सम्भूति—सूक्ष्म और स्थूल शरीर—में कारण की उपेक्षा करके रमते हैं वे उससे भी ज्यादा अन्धकार में हैं।"

सूक्ष्म और स्थूल शरीर के और ही फल कहते हैं और कारण शरीर के और ही फल कहते हैं।"

"जो कोई कार्यरूप प्रकृति=सूक्ष्म+स्थूल शरीर और कारण रूप प्रकृति=कारण शरीर, इन दोनों को साथ साथ जानता है वह कारण शरीर से मृत्यु को तैर कर कार्य शरीर से अमरता को प्राप्त करता है।"

इन मन्त्रों का मुख्य विषय सम्भूति और असम्भूति का ज्ञान है। सम्भूति कार्य प्रकृति और असम्भूति कारण रूप प्रकृति को कहते हैं। ये दोनों जब आत्मा से सम्बन्धित होती हैं तब इनके अर्थ कारण और कार्य शरीर होते हैं। कारण शरीर की कल्पना घटाकाशवत् है।

जगत् में व्यापक कारण रूप प्रकृति का जो अंश हमारे भीतर है उसी का फर्जी नाम 'कारण शरीर' है। कार्य शरीर दो हैं। सूक्ष्म और स्थूल। इन तीनों के काम अलग-अलग हैं।

स्थूल शरीर

यह शरीर सूक्ष्म शरीर का साधन है। उसी के द्वारा विषयमय जगत् से सूक्ष्म शरीर का सम्बन्ध होता है। स्थूल शरीर के विकास और उसकी पुष्टि से शरीर की उन्नति होती है।

सूक्ष्म शरीर

सूक्ष्म शरीर १७ चीजों के समुदाय का नाम है।

५ ज्ञानेन्द्रियाँ।

५ सूक्ष्म विषय=तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध)।

५ प्राण।

१ मन।

१ बुद्धि।

सूक्ष्म शरीर के विकास और उसकी पुष्टि से मानसिक उन्नति होती है।

कारण शरीर

कारण शरीर के विकास और उसकी पुष्टि से मनुष्य में प्रभु-प्रेम का संचार होता है और वह योगी बना करता है। मतलब यह है कि तीनों प्रकार के शरीर उन्नत होने चाहिए। यदि सूक्ष्म शरीरों की उपेक्षा करके केवल कारण शरीर की उन्नति चाहते हो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तो अन्धकार में पड़ना पड़ेगा। यदि कारण शरीर की उपेक्षा करके स्थूल और सूक्ष्म शरीरों को उन्नत करना चाहते हो तो भी भविष्य अन्धकारमय होगा, क्योंकि इससे नास्तिकता पैदा होगी। दोनों प्रकार के शरीरों की उन्नति साथ-साथ होनी चाहिए तभी मौत का बन्धन छूटा करता है।

मनुष्य के उपर्युक्त कर्त्तव्यों को बताते हुए उपनिषद् ने मनुष्यों को चेतावनी दी कि इन कर्त्तव्यों के पालन में सच्चाई होना चाहिए अन्यथा इनकी उपादेयता न रहेगी। चेतावनी यह है :—

"कि तुम पुरुषार्थमय जीवन सावधानता पूर्वक व्यतीत करो। संसार में धर्म क्या है ? सत्य ही धर्म है। वेद और उपनिषद ने स्पष्ट रीति से बतलाया है कि धर्म अन्य किन्हीं नियमों को नहीं वरन् सत्य ही को कहते हैं। जो धर्म है वह सत्य है, जो सत्य है वह धर्म है, बतलाया गया कि जिस सत्य को हम प्राप्त करना चाहते हैं उस पर चमकती हुई चीजों का पर्दा पड़ जाया करता है। हम सोने चाँदी और अन्य प्रलोभनों में पड़ कर सत्य से विमुख हो जाया करते हैं। जब मनुष्य अपनी कमजोरी से सत्य पर पर्दा डाल दिया करता है तब वह धर्म का प्यारा मुँह नहीं देखा करता। प्रभो ! उस पर्दे को हटा दीजिए। फल यह होगा कि सत्य रूपी धर्म दीख पड़ने लगेगा। नीति में खुले तौर पर कहा गया है :—

"यज्ञ, स्वाध्याय, दान, तप, सत्य, धृति, क्षमा, अलोभ धर्म के मार्ग हैं। पहले चार में नुमाइश की जा सकती है परन्तु अन्त के चार में नहीं। यदि इनमें सच्चाई हो तो ठीक। जब इन अन्तिम चार को न छोड़ कर काम करेंगे तो वह धर्म होगा। इन्हीं के ठीक-ठीक आचरण की शिक्षा से पर्दे के हटाने की कोशिश की गई है।

सत्य की महिमा

उपनिषद् में सत्य की बड़ी महिमा वर्णन की गई है। सत्य ईश्वर को भी कहते हैं। वह सत्य में ही प्रतिष्ठित है। एक जगह ब्रह्म का नाम 'सत्यम्' कहा गया है। ब्रह्म को 'सत्यम्' क्यों कहते हैं ? इसलिए कि 'सत्यम्' शब्द तीन अक्षरों से बना है स+ति+यम् 'स' जीव का वाचक है। 'ति' ब्रह्माण्ड के लिए प्रयुक्त हुआ है और 'यम' जीव और ब्रह्माण्ड दोनों को नियम में रखने वाला होने से ब्रह्म का नाम है। इस प्रकार 'सत्यम्' ब्रह्म ही का नाम है। ईश्वर प्राप्ति के लिए सत्य का सहारा लो। सत्य बोलो, सत्य मानो और सत्य ही करो।

उपदेश

आगे कहा गया है कि :—

"वह सबका पालन-पोषण करने वाला है, न्यायकारी है।"

शिक्षा यह है कि जिन साधनों से दुःख हुआ करता है उनसे हमें दूर कराए, जिनसे कल्याण हो वे प्राप्त कराएं।

हे प्रभु ! आप कल्याणकारी हैं, परन्तु हम आपके उस रूप को तभी देख पायेंगे जब दुःख के साधनों से रहित हो जायेंगे।

इस प्रकार आठ मन्त्रों का यह तीसरा भाग है।

इस भाग में शिक्षा यह दी गई है कि ज्ञान प्राप्त करो और उसके अनुकूल आचरण करो तथा मृत्यु को पार कर के अमरता प्राप्त करो। तुम्हारे सब कर्त्तव्यों में सत्यता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होनी चाहिए और उनका अनुष्ठान दुख को दूर करके अन्तिम गति को प्राप्त करने वाला हो। मतलब यह है कि अपने को श्रेष्ठ बनाओ।

अन्तिम उपदेश

मनुष्य के कर्त्तव्य विधान और चेतावनी देने के बाद उपनिषद् ने फिर उसे याद दिला दिया कि उसका अन्तिम उद्देश्य ईश्वर-प्राप्ति होना चाहिए जिससे उसके कर्त्तव्य दूसरी ओर न जा सकें।

कहा गया है :—

"शरीर में आने-जाने वाला जीव अमर है परन्तु यह शरीर केवल भस्म पर्यन्त है। इसलिए अन्त समय में हे जीव ! 'ओ३म् का स्मरण कर, बल प्राप्ति के लिए स्मरण कर और अपने किये हुए का स्मरण कर।'

छान्दोग्योपनिषद् में एक स्थल पर एक प्रकरण है। कृष्ण आंगिरस घोर ऋषि के पास शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। उक्त ऋषि ने कृष्ण को आखिरी बात यह बतलाई कि जब आदमी मरता हो तब उसके मुख ये तीन वाक्य निकलने चाहिएँ।

(१) हे ईश्वर ! आप एकरस रहने वाले हैं।

(२) हे ईश्वर ! आप अविनाशी हैं।

(३) हे ईश्वर ! आप सर्वजीवनप्रद सूक्ष्मतम हैं।

इन्हीं का उच्चारण करते हुए दुनियाँ से रुखसत हो जाना चाहिये। कृष्ण इस शिक्षा को सुन कर अपिपासु हो गये। कृष्ण ने क्यों यह समझा कि वे अपिपासु हो गये ? यह मृत्यु समय का एक कर्त्तव्य है। जब हम इस बात पर विचार करते हैं तब हमारे सामने मन्त्र का यह भाग कि 'तुम मृत्यु समय पर ओ३म् का स्मरण करो', आता है।

वेद के सब मन्त्रों को हम एक दृष्टि से दो भागों में बाँट सकते हैं। एक 'उपदेश' भाग और दूसरा 'नियम' भाग है। ब्रह्मचर्य पालन इत्यादि उपदेश हैं। इनका पालन करना हमारे अधीन है। परन्तु, हम नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकते। यह हमारे अधीन नहीं हैं। ऊपर के मन्त्र में उपदेश रूप में 'उनको याद कर' कहा है और 'अपने किये हुए को याद कर' नियम के रूप में है। हम उसका उल्लंघन नहीं कर सकते।

मनुष्य जीवन के दो भाग

मनुष्य जीवन दो भागों में बाँटा हुआ है। वे दो भाग ये हैं—

(१) मृत्यु के पूर्व का।

(२) मृत्यु-शय्या का।

जब मनुष्य पहले भाग में होता है तब उसे कर्म करने की पूरी स्वतन्त्रता होती है। लेकिन जब वह मृत्यु शय्या पर होता है तब यह स्वतन्त्रता छिन जाती है। दूसरा भाग वस्तुतः पहले भाग का चित्र होता है अर्थात् मृत्यु से पूर्व की परिस्थितियों और प्रभावों का मृत्यु शय्या का भाग फोटो होता है। और यही फोटो दुनियाँ के सामने आ जाया करता है। अतः स्पष्ट मालूम यह हुआ कि जीवन के पहले भाग में अर्थात् मृत्यु से पूर्व अच्छे कर्म करने चाहियें। देखना यह है कि इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में दुनियाँ का अमल कैसा है ? यदि यह अमल में आ रहा हो तब तो इसकी परवाह करनी चाहिए। इसकी जाँच के लिए हम ऐतिहासिक दुनियाँ में बैठते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कतिपय ऐतिहासिक उदाहरण

१. महमूद गजनवी गजनी का राजा था। उसने भारत पर कई बार चढ़ाई की थी। उसके जीवन का उद्देश्य उचित और अनुचित किसी भी रीति से धन संग्रह करना था। उसने गजनी को सोने चाँदी से भर दिया था। यहाँ उसके जीवन का पहला भाग खत्म होता है। अब हम उसे दूसरे भाग में अर्थात् मृत्यु शय्या पर पड़ा देखते हैं। वह मरते समय सोने चाँदी के ढेर अपने सामने [illegible]ता है। उस ढेर पर दृष्टि दौड़ाता है। उसी क्षण उसके मन में एक विचार उठता है, कि मेरी ही आज्ञा से ये ढेर लगे हैं। परन्तु अब यदि मैं चाहूँ तो इस ढेर में से जरा भी अपने साथ नहीं ले जा सकता। जब मजबूरी देखी तो रो पड़ता है और धन पर दृष्टि रखे हुए ही यहाँ से रुखसत हो जाता है। सारांश यह कि जिस प्रकार जीवन पर्यन्त उसकी दृष्टि धन पर ही रही इसी प्रकार अन्तिम समय में भी धन पर ही रही।

२. फ्रांस का राजा पीटर था। उन दिनों फ्रांस छोटी छोटी रियासतों में बंटा था। एकतन्त्र राज्य न था। वह धर्मात्मा था। येरुशलम तुर्कों के अधिकार में चला गया था। यह वह समय था जब येरुशलम की प्राप्ति के लिये ईसाई लोग धर्म युद्ध कर रहे थे। पीटर भी येरुशलम की प्राप्ति के लिए कई लड़ाइयाँ लड़ चुका था। परन्तु सब में हार गया था। उसके जीवन का उद्देश्य येरुशलम की प्राप्ति था। उसके जीवन का पहला भाग खत्म हो जाता है। वह मृत्यु शय्या पर पड़ा है। उसे उस समय मुल्क की चिन्ता न थी। उत्तराधिकारी की भी न थी। उसे चिन्ता थी तो एक थी और वह थी येरुशलम की। वह तीन बार 'येरुशलम का उच्चारण करते करते दुनिया से रुखसत हो गया। सार यह है कि मृत्यु शय्या पर दुनिया के सामने उसके पूर्व भाग का पूरा पूरा फोटो आ गया था।

३. महाराणा प्रताप भारत के एक चमकते हुए रत्न थे। भारत के इतिहास में उनका नाम सदैव स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा। चित्तौड़ और उदयपुर उनके अधिकार से निकल चुके थे। उनकी प्राप्ति के लिए उन्होंने अनुपम त्याग किया, अकबर से युद्ध किया, सुन्दर रीति से अपने कर्त्तव्य का पालन किया और अन्त में चित्तौड़ और उदयपुर प्राप्त किये। यहीं उनके जीवन का पहला भाग समाप्त होता है। वे मृत्यु शय्या पर पड़े थे। उनके निकट सरदार गण खड़े थे। उन्होंने उस समय एक बड़ी आश्चर्यजनक बात देखी और वह यह थी कि उन्हें महाराणा प्रताप की हालत एक लोभी व्यक्ति की हालत के सदृश देख पड़ी। सरदार परेशान थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या बात है जिसकी वजह से महाराणा प्रताप के प्राण अच्छी तरह नहीं निकल रहे हैं। सरदारों ने पूछा, "महाराज ! क्या हाल है ?" महाराणा प्रताप कहते हैं—

'सरदारो ! मुझे विश्वास दिलाओ कि मेवाड़ उसी प्रकार स्वतन्त्र रहेगा जिस प्रकार मैंने स्वतन्त्र रक्खा है।' सरदारों ने महाराणा प्रताप को विश्वास दिलाया। ज्यों ही विश्वास दिलाया त्योंही उनकी आत्मा निकल गई।

४. स्वामी दयानन्द का चौथा उदाहरण है। उनका उद्देश्य वेद का प्रचार और प्रजा को आस्तिक बना देना था। उन्होंने सब कष्ट इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सहे और हर प्रकार का उत्कृष्ट त्याग किया। वे मृत्यु शय्या पर पड़े हैं। लोग दूर दूर से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आए हुए हैं। उन्हीं में पं० गुरुदत्त भी हैं। स्वामी जी सब को अपनी आँखों के पीछे कर देते हैं। पं० गुरुदत्त स्वामी जी का अन्तिम समय देखने के लिए उत्सुक है। वे ऐसी जगह खड़े हो जाते हैं जहाँ से वे स्वामी जी को भली प्रकार देख सकें, परन्तु स्वामी जी उन्हें न देख सकें। स्वामी जी वेद मन्त्रों का उच्चारण करते हैं, गायत्री का पाठ करते हैं। गुरुदत्त की दृष्टि स्वामी जी के चेहरे [illegible]। स्वामी जी प्रसन्नवदन हैं। गुरुदत्त पक्के नास्तिक थे। उनके दियाग़ में लाप्लास जैसे वैज्ञानिक घर किए हुए थे जो ईश्वर को नहीं मानते थे और कहते थे कि उन्हें अपनी सफल से सफल रचनाओं और आविष्कारों में ईश्वर की कहीं जरूरत ही महसूस नहीं हुई। प्राण त्यागने से पूर्व स्वामी जी के चेहरे पर एक 'मुस्कराहट आती है। यह मुस्कराहट दिव्य थी। उसी मुस्कराहट पर गुरुदत्त मुग्ध हो जाते हैं और उनके हृदय सेनास्तिकता तिरोहित हो जाती है। स्वामी दयानन्द 'प्रभो ! तेरी इच्छा पूर्ण हो' यह कहकर प्राण त्याग देते हैं।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि यह सिद्धान्त केवल सिद्धान्त ही नहीं वरन् दुनिया के अमल में भी आता रहता है। वह समय परीक्षा का होता है। यह परीक्षा मृत्युरूपी परीक्षा है। इसमें सफलता प्राप्त करना मनुष्य के लिए जरूरी है। इसके लिए उसे पूरी पूरी तैयारी करनी चाहिए। शिक्षा यह है कि जब अन्त समय आए तब दुनिया के लोग मनुष्य को उस मृत्यु रूपी परीक्षा में उत्तीर्ण होते हुए देखें। उसमें उत्तीर्ण होने के लिए उसके स्मरण की शर्त जरूरी है। यदि ऐसा हुआ तो उत्तीर्ण हुआ समझो। यह तब ही सम्भव है जब मनुष्य उपनिषद् की उस शिक्षा का जो उसके कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में ऊपर दी है ठीक ठीक रीति से पालन करे। यदि उस शिक्षा पर न चलेगा तो कभी भी 'ओ३म्' का स्मरण न कर सकेगा। इसलिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष का कर्त्तव्य है कि इस प्रकार का यत्न करे जिससे जब परीक्षा का समय आए तो उसमें पास हो। यहाँ यह उपनिषद् एक प्रार्थना के साथ समाप्त हो जाती है।

"हे प्रकाश स्वरूप तेजस्वी प्रभु ! ऐश्वर्य प्राप्ति के लिये अच्छे मार्ग से हमको चलाइये। आप हमारे सम्पूर्ण कर्मों को जानने वाले हैं। हमको उल्टे मार्ग पर चलने रूप पाप से बचाइए इस लिए आपको बार बार नमस्कार है।"

यह उपनिषद् का अन्तिम मन्त्र है। आर्य शैली के अनुसार सारा यत्न करने के बाद मनुष्य को ईश्वर ही की दया का आश्रय लेना चाहिए। इसी के अनुसार इस प्रार्थना विधायक मन्त्र के साथ उपनिषद् समाप्त होती है। मन्त्र में पाप का कैसा सुन्दर लक्षण कर दिया है। पाप क्या है ? उलटे मार्ग पर चलना ! इस उल्टे और पाप के मार्ग पर न चलकर सीधे और पुण्य पथ का पथिक बनने के लिए ईश्वर का ही पथ-प्रदर्शन आवश्यक है। वही आदि गुरु है। वही महान् शिक्षक है। उसी का सहारा लेने से बेड़ा पार हो सकता है। इसलिए सब कुछ यत्न करके भी अन्त में उसी का आश्रय लेना चाहिए।

स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी ने आर्य समाज, सीताराम बाजार में १९३४ में ८ दिन अपनी कथा में उक्त प्रवचन दिए थे। जिन्हें श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक ने महात्मा जी को दिखा कर तैयार किया था। हम इस प्रकाशन हेतु श्री पाठक जी के अत्यन्त आभारी हैं।

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आप कुछ भी लेते हैं तो उसे पर[illegible]कर देखते हैं। बाइबिल पर विश्वास लाने वालों से कहिए कि पहले—

परख कर तो देखो कि—सत्य

बाईबिल है या वेद ?

●

चौदह दिसम्बर सन् १९६९ का दिन रविवार का दिन था। उस दिन मैं छुट्टी पर था और लिखने-पढ़ने अथवा घर का भी कोई विशेष कार्य मेरे सामने नहीं था। घर में खाली बैठे मन नहीं लगा। सोचा कि आज तो कहीं घूमने जाना चाहिए। बस स्टैण्ड की ओर चला और मिण्टो रोड के, जिसका नाम अब विवेकानन्द मार्ग हो गया है, के स्टैण्ड पर पहुंच कर खड़ा हो गया। वहाँ मुझसे पहले आने वाले बीसों सज्जन बस की प्रतीक्षा में खड़े थे। जिस को जो बस चाहिये, उसके आने पर उस पर चढ़ कर वह अपने गन्तव्य स्थान के लिये चल देता था।

कुछ काल के पश्चात् वहां आ कर एक और बस रुकी, उस पर देखा, वह १७ नम्बर की बस थी। मन में एकदम विचार आया कि यह बस भी मेरे लिये ठीक है और मैं उसी पर चढ़ गया। बस में भीड़-भड़क्का तो बहुत था, यात्रियों को बैठने और खड़ा होने के लिये भी सुविधाजनक स्थान नहीं था। कई तो स्थान लेने के लिये आपस में झगड़ा भी कर बैठते थे, कई महिलाएँ बच्चों के नाम पर बैठने की जगह की मांग कर रही थीं, कोई महिलाओं के लिये सुरक्षित सीट पर अपना अधिकार बताकर वहाँ बैठे पुरुषों को उठा रही थीं।

इतना सब था, परन्तु फिर भी सीट पर बैठे हुए यात्री खड़े हुओं अथवा परेशानी उठाने वालों को परख रहे थे और अपनी परख के बाद जिसे उचित समझते बैठने के लिये जगह दे देते थे। मैं भी खड़ा हुआ था, हाथ से कुछ पकड़ा हुआ भी नहीं था, मेरे एक हाथ में थैला था। मुझे एक यात्री ने जो सीट पर बैठा हुआ था, परखा और परख कर देखने के बाद स्वयं खड़े होकर मुझे बोला—'बाबाजी आप यहाँ बैठ जाइये, मैं खड़ा हो जाता हूँ।' मैंने उत्तर दिया—"नहीं-नहीं, आप बैठे रहिये, थोड़ी देर की बात है।" किन्तु उस यात्री ने मेरा हाथ पकड़ कर आग्रह के साथ मुझे सीट पर बैठा दिया और स्वयं खड़ा हो गया। वह मुझे बहुत देर से परख रहा था और परख कर देखने के बाद उसने मुझ को इस योग्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समझा कि इस व्यक्ति को स्थान देना चाहिये। यही विचार कर उसने मुझे आश्रय दिया और मैं मन ही मन उसकी कृपा का अनुभव करता हुआ सीट पर बैठ गया।

कण्डक्टर औरों को टिकट देता हुआ, मेरे पास भी आया। मैंने हौज खास का टिकट मांगा। मुझ से तीस नये पैसे ले कर उसने मुझे टिकट दे दिया। टिकट मैंने अपने कोट की जेब में रख लिया।

आधा घण्टा के बाद बस हौज खास पहुँच गई। कण्डक्टर ने आवाज लगाई—हौज खास! और मैं बस से नीचे उतर गया। बस से उतर कर मैं दूसरे-दूसरे मकानों को देखता हुआ वैद्य जी के मकान पर पहुँच गया।

मैं मकान के अन्दर गया तो बच्चे मुझे देख कर खुश हुए और सब ताऊ जी नमस्ते, ताऊ जी नमस्ते, कह-कह कर मेरा अभिनन्दन और स्वागत-सत्कार करने लगे। बच्चे मुझे बैठक में ले गये। वहाँ बैद्य जी के छोटे भाई थे और था एक मित्रों का समुदाय। उनमें से बहुत से मुझे भी जानते थे, बहुतों की मुझ से घनिष्टता भी थी। कई मेरा आदर करते थे और कइयों का मैं आदर करता था। मुझे देखते ही एक विचित्र-सा आनन्द उस सारी बैठक में छा गया। सब मुझ से अपने-अपने प्रश्न करने लगे। एक ने कहा—कुछ देर में आये। कोई बात नहीं—मैंने उसे उत्तर दे दिया।

इतने में ही वैद्य जी छोटी कन्या रेखा एक प्लेट में मेरे लिये हलुवा लाई और मेरे सामने रखती हुई बोली—लीजिये ताऊ जी, इतने इसे खाइये, चाय भी ला रही हूँ। मैंने पूछा—यह हलुवा किस चीज़ का बना हुआ है? वह बोली—ताऊ जी खाकर देखिये और परख कर बताइये कि किस चीज़ का है। उस छोटी-सी बिटिया ने भी मुझ से यह कहा।

वैद्य जी बड़े सुयोग्य, मधुर-भाषी और हँस मुख व्यक्ति हैं। रोगी को अच्छी प्रकार परख कर, उस की ठीक रीति से परीक्षा करके फिर दवाई देते हैं यही कारण है कि इन की दवाई से रोगी शीघ्र ही रोग से मुक्ति पा लेते हैं। इस समय भी वे किसी रोगी को परख कर दवाई देने गये थे।

वैद्य जी भी वापिस आ गये और उनसे भेंट करके मैंने बड़ी प्रसन्नता प्राप्त की। वैद्य जी भी बहुत दिनों के बाद मुझे देख कर बहुत खुश हुए।

नाश्ता आदि करके सारी मित्र-मण्डली घूमने जाने के लिये बाहर निकल पड़ी। मार्केट में से होकर जा रहे थे। फलों की कई दुकानें दिखाई दीं। जिस दुकान वाले की तरफ़ भी हममें से किसी की दृष्टि पड़ती, दुकानदार यही कहता—आइये भाई साहब मेरी चीज़ लीजिये, और अच्छी प्रकार परख कर देखिये अपनी चीज बेचने के लिये वे इतने लालायित थे। सब की बात सुनते-सुनाते और उनकी चीजें परखते हुए हम सब आगे सड़क पर निकल गये।

चलते-चलते हम सब ग्रीन-पार्क तक गये। उस पार्क के किनारे पर ही एक गिरजाघर बना हुआ है। उस दिन वहाँ नर नारियों का अच्छा भीड़-भड़क्का दिखाई दे रहा था। बच्चे और युवा सभी रंग-बिरंगी पोशाकों में वहाँ दृष्टिगोचर हो रहे थे। कन्याएँ और नवयुवतियाँ भी अपने-अपने विशेष परिधानों में वहाँ इधर-उधर घूमती दीखीं। सब प्रफुल्लित थे। सब के मुखमण्डल आनन्द के कारण कान्तिमग्न् थे। हम में से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नारायण जी की आवाज़ आई कि यह गिर्जाघर है, और आज रविवार भी है। रविवार के दिन ईसाई लोगों का गिरजा में सत्संग होता है। प्रार्थना और उपदेश होते हैं। इसी समय देखना इन्हीं घूमने वाले जोड़ों में से कइयों के विवाह भी होंगे। चलो आज इन का गिरजा घर ही देख लें। नारायण जी की बात सब को पसन्द आई और सारी मित्र मण्डली गिरजा घर में जाकर कुर्सियों पर बैठ गई।

पादरी साहब प्रार्थना कर रहे थे और सब लोग शान्त भाव से अपने-अपने स्थान पर खड़े थे। प्रार्थना के पश्चात् सब बैठ गये। फिर देवी ने यीशुमसीह की स्तुति में एक भजन गाया। हम भी शान्त होकर उनकी सारी कार्यवाही देखते रहे और तत्पश्चात् वहाँ से बाहर निकल आये। सब कुर्सियों पर एक-एक प्रति इंजील की पुस्तक की रखी हुई थी। उसमें इंजील का हिन्दी में अनुवाद छपा था। इंजील की एक प्रति उठाकर हम गिरजाघर के पादरी के पास गये और उससे प्रार्थना की कि आप इस पुस्तक का मूल्य लेकर एक प्रति हमें दे दें। पादरी ने वह पुस्तक हमें बिना मूल्य के ही देदी। पुस्तक लेकर हम उसे उलट-पलट कर देखने लगे, और हमने उस की परख करना आरम्भ कर दिया। इंजील में एक स्थान पर यह लिखा मिला—

"तब यीशु सारे गालील देश में उनकी सभाओं में उपदेश करता हुआ और राज्य का सुसमाचार प्रचार करता हुआ और लोगों में हर एक रोग और हर व्याधि को चंगा करता हुआ फिरा किया। सब रोगियों को जो नाना प्रकार के रोगों और पीड़ाओं से दुःखी थे और भूतग्रस्तों और मृगी वाले अर्द्धांगियों को उसके पास लाये और उसने चंगा किया।"

हमने इस को परखकर देखा तो यह मालूम हुआ कि यह लेख तो ऐसा ही है जैसा कि आजकल पोपलीला निकालने,मन्त्र पुरश्चरण आशीर्वाद,बीज और भस्म की चुटकी देने से भूतों को निकालना और रोगों को छुड़ाना है। ये बातें तो भोले और अशिक्षित मनुष्यों को भ्रम फंसाने के लिये हीहैं। यदि ये ईसाई लोग ईसा की इन बातों को मानते हैं तो पौराणिकों की गप्पें क्यों सच नहीं मानते ! ये बातें भी तो बिलकुल वैसी ही हैं।

आगे एक और पन्ना खोला तो उसमें लिखा था—"हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे। अपने लिये पृथिवी पर धन का संचय मत करो।"

हमारी मित्र मण्डली ने इस वचन को भी परख कर देखा और परखने के बाद इसी परिणाम पर पहुंचे कि—जिस समय ईसा का जन्म हुआ, उस समय लोग जंगली और दरिद्र थे तथा ईसा भी वैसा ही दरिद्र था। इसीलिये तो दिन भर की रोटी की प्राप्ति के लिये ईश्वर की प्रार्थना करता और सिखलाता है। जब ऐसा है तो ईसाई लोग धन संचय क्यों करते हैं ? उनको चाहिये कि ईसा के वचन के विरुद्ध न चल कर सब दान-पुण्य करके दीन हो जायें।

एक पृष्ठ पर लिखा था—"हर एक जो मुझ से हे प्रभु-हे-प्रभु कहता है, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा।"

इस की तो परख करने की भी हमें आवश्यकता नहीं मालूम दी। यह वचन तो स्वयं कह रहा था कि ईसा को प्रभु कभी नहीं कहना चाहिए क्योंकि जो इस बात को मानेंगे तो वे पाप से कभी नहीं बच सकेंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमने पुस्तक को फिर उलटा-पलटा। एक जगह यह पढ़ा—"देखो लोग एक अर्द्धांगी को जो खरीले पर पड़ा था उसके पास लाये और यीशु ने उनका विश्वास देख के उस अर्द्धांगी से कहा हे पुत्र ! डाढ़स कर, तेरे पाप क्षमा किये गये है। मैं धर्मियों को नहीं परन्तु पापियों को पश्चात्ताप के लिये बुलाने आया हूँ।"

यह बात पढ़कर सब को हंसी आ ग[illegible]। नारायण जी कहने लगे कि इन की तो सब बातें असम्भव हैं। केवल भोले लोगों को प्रलोभन देकर फंसाने की हैं। जैसे दूसरे के पीये मद्य भांग और अफीम खाये का नशा दूसरे को नहीं प्राप्त हो सकता है वैसे ही किसी का किया हुआ पाप किसी के पास नहीं जाता, किन्तु जो करता है वही भोगता है। यही ईश्वर का न्याय है। यदि दूसरे का किया पाप-पुण्य दुसरे को प्राप्त होवे अथवा न्यायाधीश स्वयं ले लेवे वा कर्त्ताओं ही को यथायोग्य फल ईश्वर न देवे तो अन्यायकारी हो जावे। धर्म ही कल्याणकारक है, ईसा वा अन्य कोई नहीं और धर्मात्माओं के लिये ईसा आदि की कुछ आवश्यकता भी नहीं और न पापियों के लिये, क्योंकि पाप किसी का नहीं छूट सकता।

नारायण जी की बात सुन कर सब मित्र कहने लगे—भाई नारायण जी ! तुम ने भी क्या पढ़ना आरम्भ कर दिया, ये सब बातें पागलों की सी हैं और इस पुस्तक के लिखने वाले को तो आगरा भेज देना चाहिये।

हंसते-हंसते नारायण जी ने एक और पन्ना खोल कर उसमें से पढ़ा—"हे अविश्वासी और हठीले लोगों ! मैं तुमसे सत्य कहता हूँ यदि तुमको राई के एक दाने के तुल्य विश्वास हो तो तुम इस पहाड़ से जो कहोगे कि यहाँ से वहाँ चला जाय वह चला जायेगा और कोई काम तुमसे असाध्य नहीं होगा।"

इस वचन की भी भली प्रकार परख की गई, किन्तु यह भी पहले वचनों के समान ही निकला अर्थात् सर्वथा असत्य और विश्वास न करने योग्य। क्योंकि विचार कर देखना चाहिए कि जो ईसाई लोग उपदेश करते फिरते हैं कि आओ हमारे मत में पाप क्षमा करा लो मुक्ति पाओ—आदि यह सब मिथ्या बात है। क्योंकि जो ईसा में पाप छुड़ाने, विश्वास जमाने और पवित्र करने का सामर्थ्य होता तो अपने शिष्यों के आत्माओं को निष्पाप विश्वासी पवित्र क्यों न कर देता ? जो ईसा के साथ-साथ घूमते थे जब उन्हीं को शुद्ध विश्वासी और कल्याण न कर सका तो वह मरे पर न जाने कहाँ है ? इस समय किसी को पवित्र नहीं कर सकेगा, जब ईसा के चेले राई भर विश्वास से रहित थे और उन्होंने यह इंजील पुस्तक बनाई हैं तब इसका प्रमाण नहीं हो सकता, क्योंकि जो अविश्वासी अपवित्रात्मा अधर्मी मनुष्यों का लेख होता है उस पर विश्वास करना कल्याण की इच्छा करने वाले मनुष्यों का काम नहीं और इसी से यह भी सिद्ध हो सकता है कि जो ईसा का वचन सच्चा है तो किसी ईसाई में एक राई के दाने के समान विश्वास अर्थात् ईमान नहीं है, जो कोई कहे कि हममें पूरा वा थोड़ा विश्वास है तो उससे कहना कि आप इस पहाड़ को मार्ग में से हटा देवें। यदि उनके हटाने से हट जाय तो भी पूरा विश्वास नहीं किन्तु एक राई के दाने के बराबर है और जो न हट सके तो समझो एक छींटा भी विश्वास, ईमान अर्थात् धर्म का ईसाइयों में नहीं है। यदि कोई कहे कि यहाँ अभिमान आदि दोषों का नाम पहाड़ है तो भी ठीक नहीं, क्योंकि जो ऐसा हो तो मुर्दे, अन्धे, कोढ़ी, भूतग्रस्तों को चंगा करना भी आलसी, अज्ञानी, विषयी और भ्रान्तों को बोध

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करके सचेत कुशल किया होगा जो ऐसा मानें तो भी ठीक नहीं, क्योंकि जो ऐसा होता तो स्वशिष्यों को ऐसा क्यों न कर सकता ? इस लिये असम्भव बात कहना ईसा के अज्ञान का प्रकाश करना है। भला, जो कुछ भी ईसा में विद्या होती तो ऐसा अटाटूट जंगलीपन की बातें क्यों कह देता ? तथापि 'विरस्त-पादपे देशे एरण्डो ऽपि द्रुमायते' जैसे जिस देश में कोई भी वृक्ष न हो तो उस देश में एरण्ड का वृक्ष ही सबसे बड़ा और अच्छा गिना जाता है, वैसे महाजंगली अविद्वानों के देश में ईसा का भी होना ठीक था, पर आजकल ईसा की क्या गणना हो सकती है।

मित्र मण्डली में से रमेश जी ने कहा—नारायण जी इस पुस्तक की बेतुकी और अविद्या से भरी जंगलीपन की बातों को अब बन्द करदो। इसकी सब बातों को अच्छी प्रकार परख कर देखा किन्तु सब मिथ्या और दोष पूर्ण ही सिद्ध हुईं। यह तो सब भोले-भाले और अनपढ़ लोगों को भ्रम में डालने और फँसाने के ही षड्यन्त्र हैं। यदि आपकी कुछ पढ़ने ही में रुचि है तो कल कृपा करके मेरे घर को पवित्र कीजिये, मैं आपको एक पुस्तक दूंगा। आप उसे पढ़ना और चाहे कितनी ही उसकी परख करना वह इस प्रकार मिथ्या और अनर्गल नहीं होगी। उसके वचन आपको सत्य और विश्वास करने योग्य ही प्रमाणित होंगे।

गिरजा घर से सारी मित्रमण्डली वैद्य जी के मकान पर वापिस आई और वहां वैद्य जी तथा उनके परिवार से और बच्चों से विदाई ले सब अपने-अपने घर चले गये।

अगले दिन नारायण जी रमेश जी के घर पहुँच गये। रमेश जी ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उन्हें एक पुस्तक दी, उसका नाम था ऋग्वेद। नारायण जी ने उसे भी इंजील के समान ही उलट पलट कर देखना आरम्भ किया। एक पन्ना खोल कर देखा तो वहां लिखा था—

"ये सब दिव्य गुण कर्म स्वभाव विद्यायुक्त और जिसमें पृथ्वी सूर्य्यादि लोक स्थित हैं और जो आकाश के समान व्यापक सब देवों का देव परमेश्वर है उसको जो मनुष्य न जानते न मानते और उसका ध्यान नहीं करते वे नास्तिक मन्दमति सदा दुःख सागर में डूबे ही रहते हैं, इसलिये सर्वदा उसी को जानकर सब मनुष्य सुखी होते हैं।"

फिर और पन्ने पलटे तो यह लिखा देखा :—

"ईश्वर सब को उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! मैं ईश्वर सब के पूर्व विद्यमान सब जगत् का पति हूँ, मैं सनातन जगत्कारण और सब धनों का विजय करने वाला और दाता हूं, मुझ ही को सब जीव जैसे पिता को सन्तान पुकारते हैं वैसे पुकारें। मैं सब को सुख देने हारे जगत् के लिये नाना प्रकार के भोजनों का विभाग पालन के लिये करता हूँ।"

आगे और भी यह लिखा हुआ मिला :—

"मैं परमैश्वर्यवान् सूर्य के सदृश सब जगत् का प्रकाशक हूँ, कभी पराजय को प्राप्त नहीं होता, और न कभी मृत्यु को प्राप्त होता हूँ, मैं ही जगत् रूप धन का निर्माता हूँ, सब जगत् की उत्पत्ति करने वाले मुझ ही को जानो। हे जीवो ! ऐश्वर्य प्राप्ति के यत्न करते हुए तुम लोग विज्ञानादि धन को मुझ से मांगो और तुम लोग मेरी मित्रता से अलग मत होओ।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नारायण जी ने कहा कि आप की पुस्तक को भी मैंने परख कर देखा। अभी क्या है अभी और अच्छी तरह परख कर देखो, पन्ने पलटते हुए रमेश जी कहा—लो यह पढ़ो :—

"हे मनुष्य जिससे यह विविध सृष्टि प्रकाशित हुई है, जो धारण और प्रलय करता है जो इस जगत् का स्वामी, जिस व्यापक में यह सब जगत् उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय को प्राप्त होता है सो परमात्मा है, उसको तू जान और दूसरे की सृष्टिकर्त्ता मत मान।"

एक और पन्ने पर लिखा था :—

"यह सब जगत् सृष्टि के पहिले अन्धकार से आवृत्त, रात्रिरूप में जानने के अयोग्य, आकाशरूप सब जगत् तथा तुच्छ अर्थात् अनन्त परमेश्वर के सम्मुख एक देशी आच्छादित था, पश्चात् परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से कारण रूप से कार्य रूप कर दिया।"

बस-बस बहुत हो गया। खूब परख लिया।

नहीं, अभी कुछ और देखो, लिखा है :—

"हे मनुष्यो! जो सब सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का आधार और जो यह जगत् हुआ है और होगा उस का एक अद्वितीय पति परमात्मा इस जगत् की उत्पत्ति के पूर्व विद्यमान था और जिसने पृथ्वी से लेकर सूर्य पर्यन्त जगत् को उत्पन्न किया है उस परमात्मा देव की प्रेम की भक्ति किया करें।"

नारायण जी ने रमेश जी ओर मुस्कराते हुए देखा और बोले—यह पुस्तक तो ज्ञान का भण्डार है! इसको खूब परख कर देखा। इसमें मिथ्या और कपोल कल्पित कोई प्रयोग नहीं। इस पर रमेश जी बोले—अब बताओ आगरा किसे भेजा जाये? और उस इंजील में लिखा है कि ईसा पाप को क्षमा करता है—यह बात बिल्कुल झूठ है, सच बात तो यह है कि पाप और पुण्यों का फल मनुष्य को अवश्य ही मिला करता है, किसी के पाप क्षमा नहीं होते। यदि पाप कर्म का फल न मिले तो पाप कर्मों में भय न होकर संसार में पाप की वृद्धि और धर्म का क्षय हो जायेगा। इसलिये पूर्व जन्म के पुण्य पाप के अनुसार वर्त्तमान जन्म और वर्त्तमान तथा पूर्वजन्म के कर्मानुसार भविष्यत् जन्म होते हैं।

नारायण जी ने रमेश जी का बहुत-बहुत धन्यवाद किया और अपने घर चले आये।

नीचे के प्रतिज्ञा पत्र पर आप अपने हस्ताक्षर कर 'जन-ज्ञान' कार्यालय में भेज दें।

"मैं वेदादि सच्छास्त्रों को ज्ञान का भण्डार और पूर्ण विद्या से सम्पन्न मानता हूँ। इन में किसी प्रकार का भ्रम, संशय और छल-कपट नहीं लोगों को भ्रम में डालने और मिथ्या-जाल में फँसाने वाली कोई भी बात इन ग्रन्थों में नहीं लिखी। ये ग्रन्थ ज्ञान को देने वाले हैं। इस लिये मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि आज से अपने सामर्थ्य के अनुसार इन ग्रन्थों का स्वाध्याय नित्य ही किया करूँगा।"

हस्ताक्षर.....

नाम और पूरा पता.....

दिनांक.....

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अराष्ट्रीय ईसाई तत्वों के विरुद्ध
११ पुस्तकें तैयार हैं

इन्हें मंगाइए : बांटिए और देश को बचाइए

१. ईसाई पादरी उत्तर दें। —स्वामी श्रद्धानन्द ३) सैकड़ा

२. A challange to the christian Faith ,, ३) सैकड़ा

३. Bible in the Balance —चार्ल्स स्मिथ १५) सैकड़ा

४. ज्ञान विज्ञान के शत्रु ईसाई मत —ओमप्रकाश त्यागी १०) सैकड़ा

५. पोप की सेना का भारत पर हमला —भारतेन्द्रनाथ १०) सैकड़ा

६. ईसाइयों की प्रचार प्रणाली —जगत् कुमार १०) सैकड़ा

७. पादरियों को चुनौती —स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती १०) सैकड़ा

८. बाइबल को चुनौती —ओम्प्रकाश त्यागी १५) सैकड़ा

९. और पादरी भाग गया —ओम्प्रकाश त्यागी १०) सैकड़ा

१०. ईसाइयत की वास्तविकता —शांति प्रकाश महोपदेशक १०) सैकड़ा

११. बाइबल कसौटी पर..... चार्ल्स स्मिथ १५) सैकड़ा

अधिक से अधिक मगांकर बांटें।

जन-ज्ञान प्रकाशन

१५९७, हरध्यान सिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

उदारता पूर्वक सहयोग दें

कुछ क्षेत्रों में ईसाई विरोधी साहित्य तो चाहिए पर वे धन नहीं भेज सकते, अतः वहां साहित्य भेजने के लिए सहयोग चाहिए। आप अपनी ओर से ईसाई प्रभावित क्षेत्रों में वितरण के लिए अधिक से अधिक साहित्य भिजवायें। यह राष्ट्र की महत्वपूर्ण सेवा होगी। इसके लिए जितनी लहायता हमें प्राप्त होगी उतना ही साहित्य हम भेज देंगे, उदारता पूर्वक सहयोग दीजिए।

राकेश रानी
—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाठकों के पत्र

●

आर्य समाज हरिद्वार के मंत्री वयोवृद्ध श्री वेणी प्रसाद जी जिज्ञासु—

'जन-ज्ञान' द्वारा आप दोनों के आर्य समाज एवं जन सेवा के कार्य को बराबर अवलोकन कर प्रसन्नता प्राप्त होती रहती है। हृदय आप दोनों की लगन उत्साह की सराहना करता रहता है। कई बार हृदय के उद्गारों का प्रगट करने की इच्छा होती रही परन्तु पत्र लिखने के आलसी स्वभाव के कारण लिख न सका। आप के पत्र से पुरानी याद ताजा हो गई है।

आप की माता जी आप को समाज सेवक बनाना चाहतीं थी। जिसको आप ने ही नहीं बल्कि अपने सहयोगी साथी को भी उसमें जुटा दिया। जिस महान् कार्य को आपने आरम्भ किया है यह समय की मांग है। आपकी हिम्मत लगन अवश्य सफलता प्रदान करेंगी इस में कुछ भी सन्देह नहीं है।

मुझे आप के जन कार्य करने का ढंग बहुत पसन्द है। इसे देख मुझे श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की याद ताजा हो रही है। उन का आर्य समाज का कार्य इसी प्रकार से संचालित होता था।

"जन ज्ञान" विशेषांक तो एक से एक बढ़ कर निकल रहे हैं। जिस के लिए आप दोनों को बधाई !

पं० विद्यानन्द शर्मा महोपदेशक का आशीर्वाद

दिसम्बर का अंक मिला—पूज्य देवता स्वरूप स्वर्गीय शहीदे अकबर स्वामी श्रद्धानन्द जी की जीवनी पर आपने प्रकाश डाला है—वह 'जन-ज्ञान' के ही हिस्से की वस्तु है। जिस बुद्धिमत्ता के साथ महापुरुष की श्रद्धाञ्जलियों का आपने चयन किया है—वह अपनी मिसाल आप ही रखता है। असगरी बेगम का सपरिवार फोटो देकर आर्य समाज को चार चाँद लगा दिये स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के "शहीदे अकबर" होने का साक्षात् प्रत्यक्ष नमूना खड़ा कर दिया—यूँ तो आप का 'जन-ज्ञान' सदैव प्रशंसा के योग्य है—परन्तु विशेषांक आपके विशेष महत्व रखते हैं। आपकी प्रोत्साहित करने वाले लेख तथा उक्तियों द्वारा जन-ज्ञान जी जान लड़ा देता है। ऐसे जबरदस्त तगड़े इंजेक्शन देने वाले बहुत कम अखबार हैं। ईश्वर करे इसकी दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि हो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बधाई पत्र

श्री सम्पादक महोदय जी,

मैंने जब आपका 'जन ज्ञान' प्रथम पढ़ा तो वस्तुतः मेरा हृदय खुशी से भरपूर हो गया। "जन ज्ञान" अपनी श्रेणी की पत्रिकाओं में सर्व श्रेष्ठ है। आपकी प्यार भरी झिड़कियों से कैसा भी सोया हुआ भारतीय आर्य जरूर जाग जायेगा। आपका इस पत्रिका के लिये आपको कोटिशः धन्यवाद है। परमात्मा इस परम पुनीत कार्य में पूर्ण सफलता प्रदान करे और इस कार्य में आपको सहयोग दे।

—रामचन्द्र जिज्ञासु आर्य

●

श्रद्धेय बहिन जी, सादर नमस्ते !

'ज्ञानप्रकाश' (नवंबर, जन ज्ञान) मिला, हृदय उत्फुल्ल हो गया। आंतरिक जिज्ञासा का शमन हुआ और आपके माध्यम से होने वाला यह राष्ट्रीय कल्याणमय यज्ञ अत्यंत पुनीत लगा। ईश्वर आपको और भी बल दे जिससे की भावी युग यह न कह सके— हम इतनी सशक्त संस्था होने पर भी गीता प्रेस वत् कोई भी अल्पमोली साहित्य प्रसार अभियान आर्य समाज करने से असमर्थ रहा। उसका ध्यान प्रायः जड़ इमारतों पर रहा। कोल्हू के बैल की भाँति जुटे रहने के कारण न समय निकाल पाता हूँ। न पैसा ही भेजने की सामर्थ्य है। क्षेत्र भी निर्धनतम अशिक्षाबहुल है, जन-ज्ञान के बल पर लोगों के संस्कार बदलने का कार्य कर रहा हूं।

—भैरवदत्त शुक्ल

●

सम्पादिका जी, सादर नमस्ते !

जब 'ज्ञान-प्रकाश' हाथ में आया तब मैंने उलट पुलट कर देखा देखने से यह प्रतीत हुआ कि इस पुस्तक को गंभीरता पूर्वक पढ़ना चाहिये। ऐसा ही किया और धीरे-धीरे अद्योपान्त पढ़ा। पढ़ने के बाद ऐसा महसूस करता हूँ कि इस विशेषांक का दूसरा नाम, 'दीपिका सत्यार्थप्रकाश' भी रखा जा सकता है। क्योंकि सत्यार्थ प्रकाश को समझने के लिये जो व्यक्ति रस्किन Ruskin के इस लाइन से काम होगा। (Authors are dead we have to stoop down) वही समझ पायेगा। आपने इस दुरूहता को 'ज्ञान प्रकाश' के द्वारा बहुत हद तक दूर कर दिया है। यह भी आप से प्रार्थना है कि पुस्तक को भी सत्यार्थ प्रकाश की भाँति अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कर दिया जाय ताकि लोग Text के साथ साथ Key भी रख लें। यदि आप अंग्रेजी में इसका अनुवाद करावें तो टाइप इतना बड़ा हो कि aged लोग भी आसानी से पढ़ सकें।

ओवरा (मिर्जापुर)

—अष्ट भुजा प्रसाद

सर्वोत्कृष्ट प्रकाशन

महोदया !

आपके वरद हस्तों से संपादित 'जन-ज्ञान मासिक' हमारे यहाँ आता है। मैं उसे बड़े प्रेम से पढ़कर स्वयं ज्ञान लाभ कर दूसरों तक भी उन विचारों को पहुँचाता हूं। जन-ज्ञान आजकल आर्य जगत् का बहुत ही शानदार एवं उच्च स्तर का पत्र बन गया है। जन ज्ञान के समस्त अंकों की सामग्री ठोस तथा धार्मिकता से ओत प्रोत होती है। मुख पृष्ठ आकर्षक, कागज उत्तम तथा टाइप अच्छा होता है। लेख ज्ञान वर्द्धक होते हैं आप ईसाइयत के समूलोच्छेदन हेतु जो प्रयास कर रहे हैं, वह सराहनीय है। वर्ष में अनेक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महत्वपूर्ण विशेषांकों के प्रकाशन से वेद प्रचार की ठोस सामग्री उपलब्ध हो जाती है।

वेद ज्योति, वैदिक गीता तथा 'ज्ञान प्रकाश' आर्य जगत् की अमूल्य निधियां हैं। आपका कार्य बहुत ही उत्तम तथा प्रशंसनीय है। इससे आर्य समाज का गौरव बढ़ा है। प्रभु आपको स्वस्थ और सुखी रखें। जन ज्ञान प्रगति पथ पर बढ़ता जाय यही प्रभु से प्रार्थना है। आप तथा संचालक जी कृपया मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

जयति "जन ज्ञान"

प्रेम नारायण 'प्रेम'

मंत्री आर्य समाज गंगा जमुनी

●

आर्य समाज के गौरव, शास्त्रार्थ महारथी

पं० बिहारी लाल शास्त्री

"श्रद्धानन्द बलिदान विशेषांक अत्यन्त उपयोगी है। प्रत्येक आर्य समाज और आर्य संस्था में रहने योग्य है। पूज्य शहीदे आज़म श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के विषय में इतनी अच्छी सामग्री आपने इक्ट्ठी की, पढ़कर आनन्द आता है।

●

पूज्य बहिन सादर नमस्ते !

आपके द्वारा प्रकाशित 'जन-ज्ञान' की शीतल रश्मियें मुझे करीब ८ माह से आनन्दोल्लास दे रही है। चन्द्रमा तक तीव्र गति से उड़ानें भरते हुए भौतिकवाद के कड़े ताप से जन साधारण अत्यन्त सन्तप्त है।

शंका ताप से त्रस्त एवं भ्रमित मानव मृग तृष्णावत् कड़ी धूप में भटक रहा है। ईश्वर-धर्म-कर्तव्य-अकर्तव्य आदि—सुमधुर, शीतल ज्ञान सागर की उपलब्धि हेतु आस्तिक भावनाओं से भटक कर कदाचित चन्द्रमा की चट्टानों के नीचे ज्ञान समुद्र मिल जाय इस भ्रान्त धारणा से अपनी आत्मिक शान्ति को भी भूल कर मानव आज त्रिशंकु की तरह 'शून्य' में लटक रहा है।

ऐसी विषम भौतिकवाद की आँधी से लड़खड़ाते हुए मानव को आपका 'जन-ज्ञान' मासिक पत्र एक शीतल—'वेद वृक्ष' का सहारा लेने के लिए प्रकाश स्तम्भ का काम कर रहा है।

ऐसे समयोपयोगी पत्र के लिए आर्य जनता इसका हृदय से स्वागत करती है।

और आशा करती है कि इस पत्र की ज्ञान रश्मिएँ भारत के घर-घर और जन-जन के हृदय में पहुंचें। मैं आर्य धर्म के दीवानों एवं महर्षि स्वामी दयानन्द के अनुयायियों से कर बद्ध प्रार्थना करता हूं कि जो इस पत्र के ग्राहक हैं वे इस पत्र के प्रचारार्थ १०-१० ग्राहक बनाने का संकल्प करें और सफल हों।

वैदिक धर्म जीवन का तथ्य है और जीवन आत्मा का धर्म है, अतः वैदिक धर्म की रक्षा और प्रसार से ही यह आत्मा जीवन धारण कर सकता है, अतः किसी दूसरे के लिये नहीं बल्कि अपनी ही जीवन रक्षा के लिये अपने धर्म की रक्षा करना प्रत्येक 'आत्मा' का कर्तव्य है। अतः ऐसे जीवन रक्षक पत्र के लिये मैं—शुभ कामना करता हूँ कि 'जन-ज्ञान' का अधिक से अधिक प्रचार हो। अन्त में प्रभु से यह प्रार्थना है कि 'जन-ज्ञान' सम्पादिका बहन जी को इस विषय में—पूर्ण सफलता प्रदान करे।

मु० कोगरा। जि० सिरोही।

छोगालाल—त्रिवेदी,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिवरात्रि पर भारी संख्या में बांटें

अनुपम वैदिक साहित्य

●

१. **वैदिक सत्संग पद्धति (हिन्दी व अंग्रेजी)**
हिन्दी और अंग्रेजी में एक साथ, प्रत्येक मंत्र के प्रत्येक शब्द की अन्वय सहित व्याख्या : अंग्रेजी और हिन्दी में मूल्य २ रु० । सजिल्द का मूल्य २॥ रु० ।

२. **वैदिक सत्संग पद्धति (हिन्दी) नया संस्करण**
(केवल हिन्दी में) इसमें प्रत्येक मंत्र के साथ उसका अर्थ दिया गया है । २८ पौंड बढ़िया कागज, तिरंगा बढ़िया आवरण, महर्षि का तिरंगा चित्र । २८ पौंड कागज, चुने हुए भजन । ८० पृष्ठ । मूल्य ६० पैसे । ५०) सैकड़ा ।

३. **Ten Commandments of the Arya Samaj** स्व० पं० चमूपति एम० ए० लिखित आर्य समाज के दस नियमों की पूर्ण प्रभावकारी व्याख्या, जिसका मूल्य पहले १ : ५० था अब केवल एक रु० प्रति/७)५० की १० प्रतियाँ मिल रही हैं । पुस्तक में महर्षि का चार रंग में चित्र अपूर्व है ।

४. **Vedic Way of life** —ला० दीवान चन्द कृत—१)

५. **Layer of life** —ला० दीवान चन्द कृत—२)

६. **Message of the Arya Samaj to the Universe**
—भारतेन्द्र नाथ लिखित ३० पैसे । २५) सैंकड़ा

७. **Vedic Sandhya & Prayer** संध्या और प्रार्थना दोनों की हिन्दी अंग्रेजी में व्याख्या ।
३० पैसे/२५) सैंकड़ा

८. **वैदिक गीता (भाष्य)** २)
महान् विद्वान् स्व० आत्मानन्द जी का यह गीता भाष्य प्रचार की दृष्टि से अनुपम है । कर्म और प्रेरणा के अदभुत संगम इस भाष्य की अपनी विशेषता है । योगेश्वर कृष्ण का तिरंगा चित्र और उनका वीर वेश देखकर आप मुग्ध हो जायेंगे ।

९. **योगेश्वर कृष्ण**—भगवान कृष्ण का यह जीवन चरित्र लाखों व्यक्तियों तक पहुँचाना चाहिये । ब्र. जगदीश विद्यार्थी एम.ए. लिखित मूल्य ४० पैसे । ३०)सैंकड़ा

१०. **क्रांन्तिकारी दयानन्द**—युग प्रर्वतक दयानन्द के क्रांतिकारी स्वरूप से सभी को परिचित कराने हेतु पुस्तक अत्यंत उपयोगी है । प्रोफ़ैसर संतराम एम० एस० सी० लिखित ।
मूल्य ७५ पैसे । ५०) सैंकड़ा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

११. **यज्ञ प्रसाद** —महात्मा आनन्द स्वामी कृत मूल्य ४० पैसे । ३०) सैकड़ा
आप यज्ञ करते होंगे तो यज्ञ के बाद प्रसाद भी बाँटते ही होंगे। यह प्रेरक महात्मा जी का रचना प्रसाद है। इसे मंगाइये और यज्ञ भावना फैलाने हेतु वितरण कीजिए।

१२. **गीत मंजरी** ८० पैसे
ईश्वर भक्ति के गीत और प्रभु से प्रार्थना करते हुए यदि आप सचमुच अपने आपको भुलाना चाहते हैं तो गीत मंजरी का सहारा लीजिए। पुस्तक अपने ढ़ंग की अनूठी है।

१३. **ज्ञान प्रकाश** —हरिशरण सिद्धाँतालंकार मूल्य १)५० पैसे
—दीनानाथ सिद्धाँतालंकार

आर्य समाज के २ विद्वानों की लेखनी से सत्यार्थ प्रकाश का सार जिस आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया है वह प्रचार के लिए अनुपम हैं सत्यार्थ प्रकाश के गूढ़ रहस्यों तक पहूंचने के लिए ज्ञान प्रकाश पढ़िए, और प्रसारित कीजिए—
१०)की १० प्रति और ७५)सैकड़ा। शीघ्र मंगाइए, स्टाक बहुत थोड़ा शेष है।

१४. **वेद ज्योति**—४०० मंत्रों का अर्थ सहित संग्रह—मूल्य ३)।

१५. **प्रार्थना मंत्र व्याख्या**—पं हरिशरण जी सिद्धांतालंकार लिखित प्रार्थना मंत्रों की अनुपम व्याख्या। मूल्य ४० पैसे

१६. **भारत की अवनति के ७ कारण**—ब्र० जगदीश एम० ए० की लोह लेखनी द्वारा लिखित पृष्ठ ६८। मूल्य ४० पैसे। ३५)। सैकड़ा २५०)हजार।

●

वह सम्पूर्ण साहित्य भारी संख्या में मंगा कर
अपने क्षेत्र पर वेद पताका लहराइए।

●

जन ज्ञान प्रकाशन

१५६७, हरध्यान सिंह रोड, (निकट ३१ नाई वाला)
करौल बाग नई दिल्ली-५

अपने आर्य समाज के वार्षिकोत्सव पर कुल व्यय का २०
प्रतिशत साहित्य वितरण पर लगाइए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पितृ भक्त भीमसिंह

—श्री योगेशचन्द्र—

मेवाड़ के राज महलों में आज बड़ी चहल पहल है। चारों ओर प्रसन्नता और उल्लास मानों फूटा पड़ता था। किसी शुभ समाचार को सुनने की उत्सुकता में मेवाड़ की जनता ने महल को चारों ओर से घेर लिया था सब उस घड़ी की प्रतीक्षा में थे जब उन्हें राज महलों से कोई सुसंवाद सुनने को मिले।

अचानक ही महलों में से एक दासी हंसती हुई निकली और बाहर खड़े नर-नारियों को राजकुमार के जन्म की खबर सुनाई। चारों ओर हर्ष का वातावरण छा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गया। बधावे बजने लगे और मेवाड़ की जनता ने अपने हर्ष को गा बजाकर प्रकट करना शुरू कर दिया। कुछ ही घंटों बाद मेवाड़ के महाराणा राजसिंह की दूसरी रानी ने भी पुत्र रत्न को जन्म दिया। अब क्या था। दोहरी खुशी ने मेवाड़ के नर नारियों को हर्ष से पागल बना दिया। कई दिनों तक मेबाड़ में खुशियाँ मनाई जाती रहीं। ज्योतिषियों और पडितों ने बड़े पुत्र का नाम भीमसिंह रखा और छोटे का जयसिंह रखा।

मेवाड़ में उस समय यह प्रथा थी कि राजकुमार के जन्म के बाद उसका पिता हाथ में 'अमरदूब' बाँधता था। जिस राजकुमार के अमरदूब बाँधी जाती थी, वही उसके पिता का कानूनी उत्तराधिकारी समझा जाता था। राजसिंह अपने दोनों राजकुमारों के हाथ में अमरदूब बाँधने के लिए निकले। जिस रानी पर उनका अधिक प्रेम था पहले उसी के यहाँ पहुँचे, और उसी पुत्र के हाथों में उन्होंने 'अमर-बेल बाँध दी। जिस राजकुमार के हाथ में उन्होंने 'अमर-बेल' बाँधी उसका नाम जयसिंह था और वह महाराज राजसिंह की दूसरी रानी से उत्पन्न राजकुमार से कुछ घंटे छोटा था। बड़े राजकुमार का नाम भीमसिंह था, और असल में वही राज्य के अधिकारी थे।

यह सब कुछ कर चुकने के बाद महाराज राजसिंह को अपनी गलती पर बड़ा पश्चाताप हुआ। किन्तु अब क्या हो सकता था। उन्होंने कुछ सोच कर अपने बड़े राजकुमार भीमसिंह को बुलाकर कहा, "भीमसिंह, मेरी जरा सी गल्ती से तुम्हारे साथ इतना बड़ा अन्याय हो जायेगा, इसकी मुझे बिलकुल आशा न थी। तुम यह तलवार लो और इससे अपने भाई जयसिंह को मार डालो। जिससे बाद में कलह का कोई भय न रहे। इस तरह तुम राज्य के उत्तराधिकारी बने रहोगे।" यह कहते कहते महाराजा का कंठ रुँध गया और आंखों से आंसू बहने लगे, पास ही जयसिंह भी खड़ा था।

पितृभक्त भीमसिंह से यह सब न देखा गया। उसका बदन थर-थर कांपने लगा। "पिता जी, मेरे हित के कारण ही आप मेरे हाथों इतना बड़ा निर्दयतापूर्ण कार्य कराना चाहते हैं, किन्तु क्या आप मुझे इतना नीच समझते हैं कि मैं इस तुच्छ राज्य की खातिर अपने हाथ छोटे भाई के खून से रंगूं। मैं आपके चरणों की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि आपके सामने या पीछे कभी भी राज्य के लिए कोई झगड़ा न होगा। आपको विश्वास दिलाने के लिए मैं अभी मेवाड़ छोड़ कर चला जाता हूँ।"

भीमसिंह तुरन्त ही मेवाड़ छोड़ कर चला गया। दिल्ली जाकर वह बहादुरशाह की सेना में भरती हो गया, जहां काबुल के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुआ।

धन्य है वह भाई, जिसने अपने छोटे भाई के लिए राज पाट का सब लालच छोड़ दिया, ऐसे ही वीर शूरमाओं के कारण राजस्थान वीरभूमि कहलाता है।

इस प्रकार जयसिंह आपने पिता राजसिंह के बाद मेवाड़ के सिंहासन पर बैठा। बड़ी योग्यतापूर्वक राजकाज चलाने लगा। उसने दो विवाह किये। एक परमार वंश की राजकुमारी कमला देवी से और दूसरा हाड़ा वंश की सरदारों की कन्या से। हांडी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रानी बड़ी वीर थी।

महाराजा जयसिंह को शिकार खेलने का बहुत शौक था। वे दूर जंगलों में निकल जाते और नाना प्रकार की कठिनाइयों का सामना करके शेर को मार कर लाते, और उसे हांड़ी रानी के पास भिजवा देते। महाराज जयसिंह के अनुचर अपने स्वामी की खूब बढ़ चढ़ कर प्रशंसा करते। अपने स्वामी की प्रशंसा सुनने पर हांड़ी रानी प्रसन्न होने की बजाय मुस्करा कर कह देती, "यह भी कोई शिकार है। शिकार करना हो तो बूंदी के भयानक जंगलों में किया जाय तो पता चले।"

एक दिन महाराजा जयसिंह को यह बात बहुत चुभ गई और वे हांडी रानी को और अपने कुछ साथियों को लेकर बूंदी के जंगल की ओर चल पड़े।

जंगल में ऊंचाई पर मचान बाँधा गया। महाराजा जयसिंह, हांड़ी रानी और कुछ राजपूत सरदार उस पर जा बैठे। बड़ी तत्परता से शेर की प्रतीक्षा करने लगे। अचानक शेर दहाड़ता हुआ निकला महाराज के भाई ने मंच पर से ही शेर पर गोली चलायी। शेर दहाड़ता हुआ उछला और एक दम मंच की ओर आ गया है।

सब भयातुर होकर एक दूसरे का मुंह देखने लगे। किन्तु इसी बीच महारानी हांड़ी ने अपनी कमर से, कटारी निकाली और उसको नीचे गिरने से पहले ही काम तमाम कर दिया। और राजा जयसिंह से कहा, "देखिये इसको कहते हैं शिकार।" राजा जयसिंह कुछ लज्जित हुए किन्तु साथ ही उन्होंने रानी की वीरता की सराहना भी की। इस प्रकार महाराजा जयसिंह ने अपनी अपनी वीर रानी के साथ मेवाड़ पर बहुत दिनों तक शासन किया।

बढ़ते चलो तुम !

कर्म पथ पर शूर पंथी सतत नित बढ़ते चलो तुम।
शिथिल-जीवन चेतनामय कर्म से करते चलो तुम॥
विघ्न बाधाएँ हटाकर मंजिलें तय कर तू अपनी,
कंटकों से पूर्ण पथ फिर भी न तज तू राह अपनी,
तमस झंझावात घन दामिनि भी दमकें औ डरायें,
जाल माया के अनेकों राह में मन को सतायें,
अडिग अपने ध्येय पर पंथी बढ़ो आगे चलो तुम।
शिथिल-जीवन चेतनामय कर्म से करते चलो तुम॥
मन में दृढ़ संकल्प शक्ति के जो विद्युत्कण पड़े हों,
लो जुटा उनको समन्वित रूप में फिर वे खड़े हों,
राह में साथी न हों डर कर न पीछे पग हटाना,
हो हिमालय भी डगर में प्रेम से पथ तुम बनाना,
अटल ध्रुव की भांति निर्भय क्षेत्रों में आगे बढ़ो तुम।
शिथिल-जीवन चेतनामय कर्म से करते चलो तुम॥
कर्तव्यको अपने समझ वैभवसे विचलित हो न जाना,
पालना कर्तव्य लोहे के चने सचमुच चबाना,
हो निराशा कार्य में हंसता हो पंथी गर जमाना,
धैर्य को हरगिज न खोना मृत्यु को सीने लगाना,
कर्म ही जीवन है 'विद्या' कर्म पथ पर गति बनो तुम।
शिथिल-जीवन चेतनामय कर्म से करते चलो तुम॥

—विद्यावती नम्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रेरणा

—जगदीश विद्यार्थी एम० ए०

दो महान शक्ति

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यन्चौ चरतः सह ।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना ।। (यजु० २०-२५)

जहाँ, जिस राष्ट्र में, जिस देश में, जिस स्थान पर, ज्ञान और बल, ब्रह्मशक्ति और क्षात्र-शक्ति, ब्रह्मतेज और क्षात्रतेज संयुक्त होकर साथ=साथ चलते हैं तथा जहाँ देवजन-नागरिक राष्ट्रोन्नति की भावनाओं से भरपूर होते हैं मैं उस अथवा राष्ट्र को पवित्र और उत्कृष्ट मानता हूं ।

यदि राष्ट्र की रथ से उपमा दी जाये तो ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति उसके दो पहिये हैं । जिस प्रकार दोनों पहियों के ठीक होने पर ही रथ ठीक प्रकार से चल सकता है उसी प्रकार जिस राष्ट्र में ब्रह्मतेज और क्षात्रतेज साथ-साथ चलते हैं वही राष्ट्र आदर्श राष्ट्र है ।

इसी मन्त्र की व्याख्या करते हुए ही गीता के अन्त में संजय ने कहा था—

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।। (गीता० १८।७४)

हे धृतराष्ट्र ! जहाँ योगेश्वर कृष्ण—ब्रह्मशक्ति और धनुर्धारी अर्जुन—क्षात्रशक्ति है वहीं लक्ष्मी, विजय, ऐश्वर्य की समृद्धि और न्याय—ये चारों बातें अवश्य होंगी ऐसी मेरी सम्मति है ।

जो बात राष्ट्र के लिए है वही बात व्यक्ति के लिए भी है । हमारे जीवनों में ब्रह्मबल और क्षात्रबल दोनों ही होने चाहिएं । आचार्य द्रोण ने महाराज द्रुपद को सम्बोधित करते हुए यही तो कहा था—

अग्रस्तश्चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः ।
इदं ब्राह्ममिदं क्षात्रं शास्त्रादपि शरादपि ।।

चारों वेद मेरे आगे हैं, पीछे धनुष और बाण हैं । अस्त्र और शस्त्र दोनों ही प्रकार से मैं तुम्हारा मान मर्दन करने को तैयार हूँ ।

किसी भी राष्ट्र में दोनों शक्तियों का सह-विकास होना चाहिए । यदि राष्ट्र में कोई बाह्यशक्ति का नाश करना चाहे तो वेद का आदेश है ।

वृश्च प्रवृश्च सं वृश्च दह प्र दह सं दह । (अथर्व० १२।५।६२)

उसे काट, अच्छी तरह काट, खूब अच्छी तरह काट, उसे जला, अच्छी प्रकार, जला, खूब अच्छी प्रकार जला डाल, और

आमूलादनु सं दह ।। (अथर्व० १२।५।६३)
ऐसा जला कि जड़ मूल से फूंक डाल ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ज्योति को प्रसारेंगे

आओ ! हम वीर बनें ।
वीर रणधीर बनें,
मां के सच्चे भक्त,
हम कर्म वीर बनें,
युग को नये प्राण दें,
जन-जन को ज्ञान दें,
सेवा से, मन बदलें,
हाथों से युग बदलें,
सबका विकास करें,
तम का विनाश करें,
पाप ताप सब हरें,
धर्म का प्रकाश करें,
संकट में जीतें हम,
दुश्मन मन जीतें हम,
आगे ही आगे हम,
बढ़ते ही जाएं हम,

—ज्योत्स्ना

●

हम आर्य वीर हैं,
राष्ट्र के सुवीर हैं,
पाप को बिसारेंगे ज्योति को प्रसारेंगे ।

नव युवकों से

उठो नौ जवानों स्वतन्त्र भारत का चलन बदलो ।
सजावट छोड़ दो झूठी विदेशी बाँक पन बदलो ।।
बता इन्सानी चोलों में कहा तफरीक मिलती है ।
पड़े भेदों की दल दल में जरा गंदा जहन बदलो ।
कभी आफत मुसीबत में किसी के काम आये हैं ?
खुदी में डूबने वालो खुदी का पैरहन बदलो ।।
हजारों रिश्वत खोर हैं यहाँ पर लुटेरे चोर रहजन हैं ।
जबाँ बदलो, अमल बदलो कर्म बदलो, वचन बदलो ।।
रंगी फैशन परस्ती में स्कूल कालिज और दरसगाहें ।
उत्तम शिक्षा पढ़ाओ भारत को मगरबी मर्दों जन बदलो,
बड़ी मुश्किल से पाई है आजादी की फजा तुमने ।
रहन बदलो, सहन बदलो, जमाँ बदलो, जमन बदलो ।।

—रामचन्द्र गुप्त सिद्धांतालंकार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्राणों का दीप

लघु प्राणों को,
वरदान मिला करता ।
प्राणों का दीप जला करता ।।

आजीवन जलना,
इस जीवन का ध्येय नहीं है ।
हृदयहीन का त्याग,
मेरा पाथेय नहीं है ।
जिसे चाहिए सुधा उसे,
गरल मिला करता ।
प्राणों का दीप जला करता ।

मूक व्यथा की ज्वाला में,
मैं तिल-तिल जलती,
आवेशों की छाया में,
मैं निशदिन पलती ।
कभी-कभी विश्वासों का,
जाल मिला करता ।
प्राणों का दीप जला करता ।

मेरा पथ अपनी भाषा,
अपनी जलन लिए है,
अपने आंसू भी जीवन में,
मैंने घोल पिए हैं ।
फिर भी यहाँ नियति का,
षडयंत्र चला करता ।
प्राणों का दीप जला करता ।

लेखिका, कवीयत्री और सहृदय
विचारशील आर्य महिला
डा० श्रीमती राजबुद्धिराजा
एम. ए. पी. एच. डी.

आपके २ गीत आप पढ़ ही रहे हैं,
भविष्य में भी इनसे बड़ी आशाएं हैं ।

प्रहरी

सोया जग पर जाग रहा यह ।
अपने मन का लहरी,
दीप निशा का प्रहरी ।
संघर्षों से जीवन का,
रस मैंने खींचा ।
अपने ही प्राणों से,
जीवनःपथ मैंने सींचा ।
मत करो सुप्त कीट,
तारकों से तुलना मेरी ।
दीप निशा का प्रहरी ।।
आत्मलीन एकाकी,
नीरवता के तट पर ।
लिखा हुआ अध्याय,
तमिस्त्रा के हैपट पर ।
वर्तमान ने पढ़ा उसे पर,
रेख विगत की गहरी ।
दीप निशा का प्रहरी ।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मुझे पहले पता होता तो हम आपको कभी भी शीघ्र पठन की शिक्षा न दिलाता.....देवीजी !

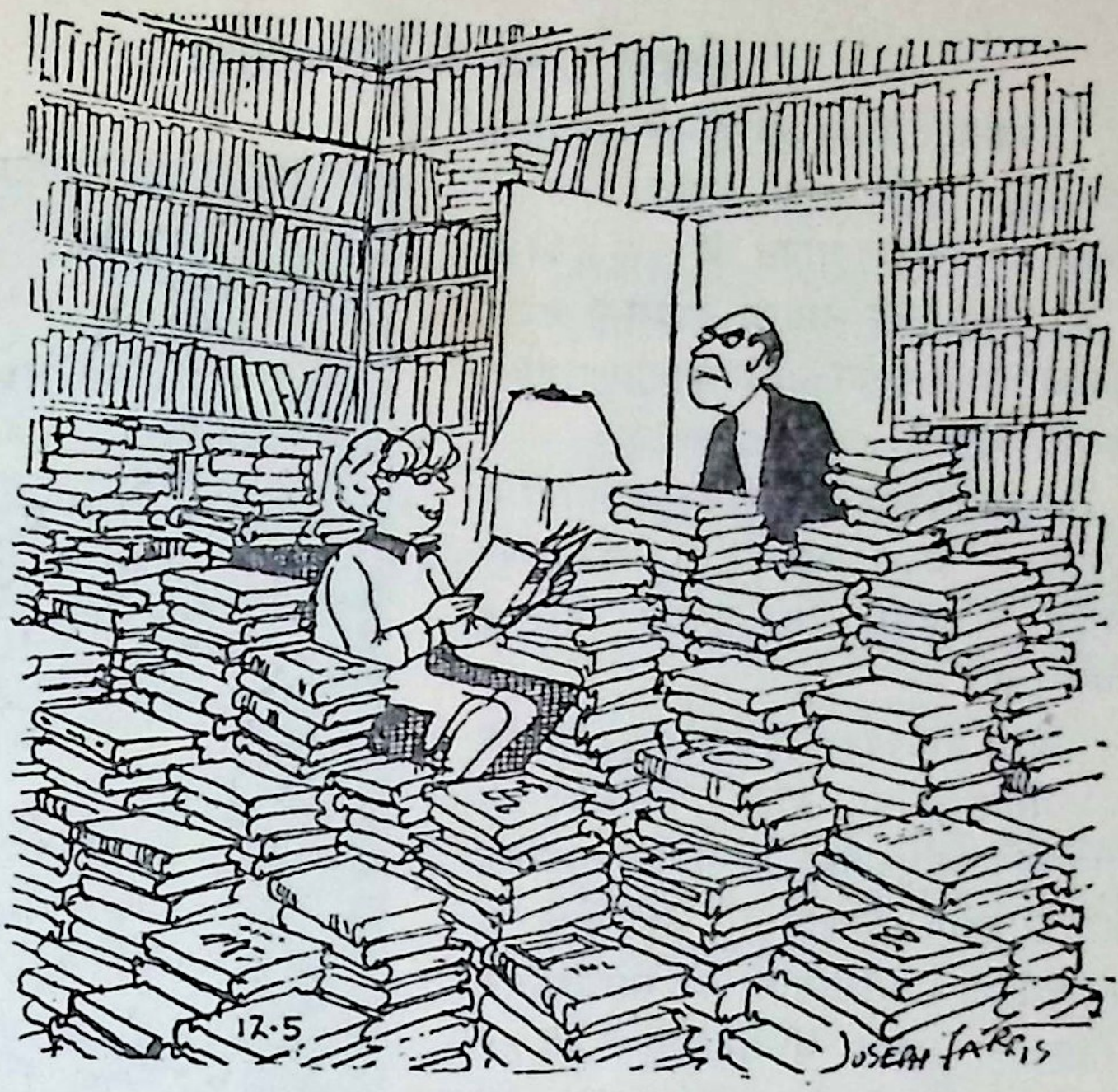

हरिद्वार में आर्य समाज मन्दिर निर्माण

चिरकाल से आर्य जगत् की यह प्रबल कामना थी कि हरिद्वार जैसे लोक प्रिय तीर्थ स्थान में आर्य समाज मन्दिर का निर्माण होना चाहिए जहां से पुण्य वेद वाणी का प्रसार हो सके प्रबल संघर्ष दौड़ धूप के पश्चात् ललतारोव गंगा पुल के समीप एक भूमि सामने उपलब्ध हो गया है। इसके साथ कलकल करती पुण्य सरिता जान्हवी बह रही है, खण्ड पार किनारे पर लम्बा पक्का घाट चण्डी पर्वत माला अपने हरे भरे-वृक्षों से शोभायमान है, एवं इसके नीचे परम पावनी गंगा की नील धारा आगन्तुकों के मनों को आल्हादित कर रही है।

इस पावन भूमि खण्ड पर तीन मण्डल आर्य समाज मन्दिर का निर्माण कार्य आरम्भ हो गया है। इस में सत्संग भवन, यज्ञशाला, वेद वेदांगों, ग्रंथ रत्नों के लिए पुस्तकालय, स्नान ध्यान स्वाध्याय के लिए सुन्दर गंगा घाट और अतिथि गृह आदि उपयोगी कक्ष भी बनाए जावेंगे। प्रयत्न किया जा रहा है कि यह मन्दिर सभी धर्म-प्रेमियों, स्वाध्याय शील, तपस्वी सज्जनों के लिए परम पावन तीर्थ स्थल बन सके।

इस तीर्थ स्थल के निर्माण में लगभग चार लाख रुपये के व्यय का अनुमान है। हमें पूर्ण विश्वास है कि भारत के सभी आस्तिक, उपकारी, धर्म प्रेमी, इस पुनीत कार्य के निर्माण में पूर्ण सहयोग एवं सहायता प्रदान करेंगे। धनदाता दानी महानुभावों के नाम संगमरमर की पट्टी पर अंकित किए जाएंगे। जो दानी महानुभाव मन्दिर में एक एक कक्ष बनवाना चाहेंगे उनका नाम संगमरमर की पट्टी पर सुन्दर अक्षरों में अंकित करके उस कक्ष पर लगा दिया जावेगा।

जो महानुभाव दान के रुपये डाक द्वारा भेजना चाहें वे निम्नलिखित पते पर भेज सकते हैं। १. श्री धर्म पाल जी विद्यालंकार संयोजक आर्यसमाज हरिद्वार भवन निर्माण समिति डा० गुरुकुल काँगड़ी (हरिद्वार)।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सीमांत गांधी की भारत यात्रा

स्वतन्त्रता संग्राम के पुराने महारथी खां अब्दुल गफ्फार खां भारत आये ! उनका स्वागत जन-मानस ने मुक्त हृदय से किया किन्तु उनके भाषण, उपदेश ने भारत का मार्ग-दर्शन न कर उसके जख्मों पर नमक ही छिड़का है।

काश्मीर और भारत के मुसलमानों के सन्दर्भ में उनके वक्तव्यों से भारत का अहित ही हुआ, ऐसा हमारा निश्चित विचार है।

आज आवश्यकता इस बात की थी कि श्री सीमांत गांधी भारत के मुसलमान नागरिकों को पूर्णतया भारत का नागरिक और भारतीय संस्कृति का भक्त बनने का परामर्श देते। पाकिस्तान की साम्प्रदायिक नीति की निन्दा भी उनसे सुनने की हमें आशा थी। पर वे तो हमारे घर में आकर हमें प्रताड़ित कर रहे हैं। पता नहीं वह कौन सी भावना है जिसने स्वतन्त्रता सेनानी को भी भारत की गरिमा की प्रशंसा से रोक रखा है। अतिथि का स्वागत करते हुए भी अतिथि की भावनाओं का स्वागत करने में हम अपने को असमर्थ हैं।

—सम्पादक

अब्दुल गफ्फार खाँ

वी० पी० पी० की आदत छोड़िए

"जन-ज्ञान" के सदस्यों से हमारा सानुरोध निवेदन है कि वे वी० पी० की आदत छोड़ें और अपना शुल्क आदि पत्र मिलने पर मनिआर्डर से भेजने का स्वभाव बनाएं। वी० पी० पी० की प्रथा से 'जन-ज्ञान' के सदस्यों का हजारों रुपया पोस्ट आफिस की भेंट चढ़ता है, जो न हमारे काम आता है न आपके। अतः सभी शुल्क आदि मनिआर्डर से भेज दिया करें तो यह राशि आपके पास बच सकती है और इसका सदुपयोग कर एक बड़ा ग्रन्थ तैयार हो सकता है। आशा है इस दिशा में सदस्य गण ध्यान देंगे। —व्यवस्थापक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विडम्बना

गांधी बाबा के सुराज में
सुरा बहुत है, राज नहीं है।
राज बहुत खुलते हैं, लेकिन
खिलता यहाँ समाज नहीं है।

यह देखो कैसी विडम्बना !
राजनीति में नीति नहीं है
और राजनैतिक लोगों को
नैतिकता से प्रीति नहीं है।

यह देखो, कैसा मजाक है,
कला बिक रही बाजारों में।
रूप खड़ा है चौराहे पर,
जग लग रही हथियारों में।

यह कैसा साहित्य कि जिसका
हित से कुछ संबन्ध नहीं है।
सभी यहां मुक्तक हैं यारो
कोई यहाँ प्रबन्ध नहीं है।

हर आवारा अब नेता है,
हर अहदी बन गया विचारक।
जिसके हाथ लग गया माइक,
वही बन गया प्रबल प्रचारक।

आलोचना लोच से खाली
अब मजाक में मजा न, गम है।
सत्ता से सत निकल गया है,
सिर्फ अहम में हम-ही-हम है।

—गोपालप्रसाद व्यास

राष्ट्र में 'राम-राज्य' स्थापित करना है तो 'धर्म-राज्य' स्थापित करें

सिखाया हुआ गवाह !

किसी मामले में एक छोटे बच्चे की गवाही थी। बच्चे की ओर देखते हुए जज ने प्रश्न किया—'क्या तुम्हें अदालत में बयान देने के सम्बन्ध में किसी ने कुछ सिखा-पढ़ा कर भी भेजा है ?'

'जी हाँ !' बच्चे ने जवाब दिया।

विरोधी पक्ष का वकील चिल्ला उठा—'मैं तो पहले से ही कह रहा था। जरूर ही इसे सिखा पढ़ा कर यहां लाया गया है।

वकील को चुप रहने का आदेश दे कर जज ने पुनः बच्चे से पूछा—'किस ने सिखाया है तुम्हें ?'

'मेरे पिता ने।'

वकील जज का आदेश भूल खुशी से पुनः चिल्लाया 'बिल्कुल ठीक कह रहा है यह।'

जज ने वकील की ओर ध्यान नहीं दिया। बच्चे की ओर मुड़कर उसने अपना तीसरा सवाल पूछा, 'क्या सिखाया गया है तुम्हें ?'

'यही कि अदालत में विरोधी पक्ष का वकील तुम्हें तरह तरह से परेशान करेगा, परन्तु तुम सच्ची बातें ही कहना।'

धन्यवाद

श्री मुन्शी राम जी 'आर्य' तथा श्री ईश्वर लाल जी गढ़हरा (मुंगेर) क्षेत्र में बड़ी लगन और निष्ठा से जन-ज्ञान की प्रगति में सहयोग दे रहे हैं।

—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अराष्ट्रीय प्रचार निरोध समिति,

झाबुआ–रतलाम (सम्भाग)

धर्म प्रेमी सज्जनो !

आपको भली प्रकार विदित ही है कि बहुत समय से हमारे देश के अन्दर ईसाईयों की अराष्ट्रीय गति-विधियां तेजी से बढ़ रही हैं। हमारे हिन्दू धर्म को मिटाने में जी-जान से जुटी हुई हैं। इसके भंयकर जाल में झाबुआ जिला मध्य-प्रदेश तथा उसके आस पास का क्षेत्र रतलाम, दोहद, जालोद, रावटी, कुशलगढ़ आदि की जनता फंसती जा रही है और फंस चुकी है। इस कुचक्र के विरोध में हमारे आर्य जगत् के वयोवृद्ध तपस्वी नेता-श्री पंडित देवप्रकाश जी, भूत-पूर्व प्रिन्सपल अरबी संस्कृत महा विद्यालय अमृतसर पंजाब सन् १९३६ से एकमन होकर जुटे हैं। उन्होंने हजारों ईसाईयों और बहाईयों को पुनः हिन्दू धर्म की दीक्षा दी, शुद्ध किया। जो बनवासी, ईसाई हो चुके थे उनको काफी संख्या में वापिस किया। इसी प्रकार वलाई जाति जो बहाई हो रही थी उसको रोका। और एक लाख के लगभग शुद्ध कर हिन्दू धर्म में दीक्षित किया। अब कुछ समय से उन्होंने झाबुआ आदि क्षेत्र में रक्षा एवं शुद्धि का कार्य आरम्भ कर दिया है। उनके ही मार्ग दर्शन में अराष्ट्रीय प्रचार विरोध समिति सम्भाग रतलाम झाबुआ उत्त क्षेत्र में तेजी से कार्य कर रही है। समिति का उद्देश्य ईसाईयों की अराष्ट्रीय हरकतों को रोकना और जो भाई ईसाई बन चुके थे। उन्हें वापिस हिन्दु धर्म दी दीक्षा देना। उनको शिक्षित करने के लिए विद्यालय, छात्रवास आदि की व्यवस्था करना।

इस महान् कार्य की पूर्ति के लिए महामंत्री-पण्डित ब्रजमित्र मेधावी जी शास्त्री अराष्ट्रीय प्रचार निरोध समिति ने रु० १००००० एक लाख धन संग्रह करने की प्रतिज्ञा की हैं जिसका स्वागत आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध सन्यासी श्री पूज्य स्वामी शिवानन्द जी सरस्वती (गुजरात वाले) ने किया और उन्होंने पंडित मेधावी जी शास्त्री को साथ लेकर धन संग्रह कार्य आरम्भ कर दिया है।

अतः-धर्म प्रेमी महानुभावों से प्रार्थना है कि इस महान कार्य को अपना मुख्य कर्तव्य समझते हुए इन दोनों महान आत्माओं के पहुँचने पर तन, मन, धन से पूरा पूरा सहयोग करेंगे।

निवेदक :-

संगठक
देवप्रकाश
रतलाम

प्रधान
भगवानदास ठेकेदार
नागदा

कार्यालय –अराष्ट्रीय निरोध समिति संभाग रतलाम झाबुआ (मध्य प्रदेश)

आर्य समाज रतलाम

लक्ष्य की सफलता के लिए हमें अधिक से अधिक अराष्ट्रीय ईसाई सम्बन्धी साहित्य हिन्दी अंग्रेजी में आर्य समाज रतलाम को भेजें—

मन्त्री

जन ज्ञान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—सत्यपाल शर्मा एम. ए.

धर्म क्या है ?

o जिनसे ऐहिक उन्नति जन्म मरण से छुटकारा प्राप्त हो, वह धर्म है।

o वेदों, स्मृतिशास्त्रों तथा उपनिषदादियों में जो कुछ प्रतिपादित है, वह धर्म है।

o महान् पुरुषों, ऋषि-मुनियों एवं सन्त महान् आत्माओं ने, चाहे वे विश्व के किसी भी प्रदेश के क्यों न हों, अपने सद्-आचरणों में जो वेद युक्त व्यवहार विश्व के सम्मुख रखा है वह धर्म है।

o धर्म की सबसे बड़ी कसौटी यह है कि जो बात तुम्हारे अपने मन को अच्छी नहीं लगती वह दूसरे के लिए न करो।

o तुम्हें कोई गाली दे तो बुरा लगेगा-तुम भी दूसरों को गाली न दो।

o तुम्हारे बच्चों को कोई मारेगा तो तुम्हें दुःख होगा—तुम दूसरों के बच्चों को, चाहे वे पशु या पक्षी ही क्यों न हों (क्यों कि वे भी ईश्वर की सन्तान हैं) मत मारो।

o तुम्हारा मांस कोई खाने आए या तुम्हारी हत्या करने कोई आए तो तुम्हें क्या अच्छा लगेगा ?—तुम भी दूसरों की हत्या न करो।

o तुमसे कोई झूठ बोले, धोखा दे. वादा करके काम न करे तो तुम्हें कितना बुरा लगेगा—तुम भी ऐसा व्यवहार दूसरों के साथ न करो।

o तुम्हारा कोई अहित करे, तुम्हें नुकसान पहुँचाए चोरी करे, तुम्हारी चीज पर जबर्दस्ती अपना अधिकार जमा ले, तुम्हें लूटे, तुम्हें हानि पहुंचाकर खुद अपना काम सिद्ध करना चाहे तो कितना बुरा लगेगा तुम्हें—फिर तुम क्यों दूसरों के लिए ऐसा करते हो ?

o तुम्हारी मां, बेटी, बहन, बहू, भाई या घर के किसी भी सम्बन्धी पर कोई बुरी नजर डाले तो तुम्हें कितना गुस्सा आता है—जी में आता है कि उसकी आंखें निकाल लें-जरासोचो, कहीं तुम भी किसी की माँ, बहिन आदि पर बुरी नजर तो नहीं डालते ?

o यदि तुम्हारे घर में—पति-पत्नी के बीच, पिता-पुत्र के बीच, सास-बहू के बीच, ननद-भाभी के बीच, भाई भाई के बीच, भाई-बहन के बीच कोई भेद भाव पैदा करे या अन्य किसी प्रकार से तुम्हारे घर की शान्ति और सुख को बिगाड़े तो तुम क्या उसे घर में घुसने दोगे—नहीं न ? फिर···तुम भी दूसरों के लिए ऐसा न करो।

o यदि कोई तुम्हारे मार्ग पर काँटे बोए तो तुम्हें उस पर कितना क्रोध आएगा—तुम भी दूसरों के लिए काँटे न बोओ।

o तुम जिसका उपकार करते हो यदि वह तुम्हारा ही अहित करने लगे, तुम्हारे प्रति कृतघ्न हो तो तुम्हें उस व्यक्ति से घृणा हो जाएगी—तुम भी कृतघ्न न बनो। महाराजा राम की तरह दूसरों के थोड़े भी उपकार को मत भूलो और दूसरों के बहुत बड़े अपकार को भी भूल जाओ।

o धर्म से किसी का अहित नहीं होता।

o धर्म व्यक्ति, समाज, देश और विश्व में शान्ति लाता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

o जिससे झगड़ा फैलता हो, जिससे मनुष्य मनुष्य से द्वेष करता हो, मनुष्य के मन में ईर्ष्या पैदा होती हो, जिससे मनुष्य धन और विषय-वासना (Sex) के जाल में फँसता हो, जिससे समाज में या देश में अशान्ति फैलती है, जिससे विश्व युद्ध की लपटों में झुलसने लगे, जिससे मनुष्य मनुष्य न रहकर हिंसक, क्रूर, असत्यशील, धोखेबाज और पशु से भी नीच हो जाता है वह 'धर्म' नहीं है।

o सत्य धर्म के मानने वाले कभी आपस में नहीं झगड़ते—सम्प्रदायी लड़ा करते हैं।

o अध्यात्मवाद शान्ति लाता है, भौतिक वाद दुःखों और झगड़ों की जड़ हैं, इस लिए जहां भी झगड़े और अशान्ति है वहाँ भौतिकवाद का ही शासन मानना चाहिए। लड़ने वाले यदि अपने आपको धार्मिक कहते हैं तो उनसे अधिक धोखे बाज, झूठा और अज्ञानी और कोई नहीं है। ऐसे व्यक्ति धर्म की खाल ओढ़े होते हैं अन्दर भौतिकवाद का राक्षस पल रहा होता है। ऐसे आडम्बरियों से दूर रहना चाहिए और समाज में ऐसे स्वार्थलोलुप आडम्बरी व्यक्ति को घुसने नहीं देने चाहिच।

"धर्मः स नो यत्र न सत्यमस्ति,
सत्य न तद्यच्छलमभ्युपैति"

o समाज और राष्ट्रीय को जीवित रखने के लिए उसे सम्प्रदाय—निरपेक्ष होगा धर्म-निरपेक्ष नहीं। धर्म-निरपेक्ष समाज में नास्तिकता, भ्रष्टाचार, व्यभिचार असभ्यता, अत्याचार और अनाचार फैल जाते हैं। धर्म और सत्य समाज की रीढ़ है।

सत्य क्या है ?

o जो जैसा है, वैसे ही जानना और मानना सत्य है।

o सत्य सदैव कल्याणकारी होता है।

o सत्य छल और कपट से शून्य होता है।

साम्प्रदायिकता

o धर्म और सम्प्रदाय के भेद को ठीक-ठीक समझ लेना चाहिए। धर्म एक है सम्प्रदाय अनेक। अनेक धर्मों की बात कहना अज्ञान का सूचक है। धर्म का मूल वेद है—सम्प्रदायों का मूल है मनुष्यों की स्वार्थ लोलुपता। धर्म एकता, शान्ति और प्रेम का प्रसार करता है—सम्प्रदाय भेदभाव, अशान्ति घृणा, ईर्ष्या और द्वेष का।

o सम्प्रदायों का जन्म कैसे हुआ ? जब अपने पराए भाव का उदय हुआ और मनुष्य ने अपनों की अनुचित बात का भी पोषण आरम्भ किया तब अपनी कही बात के पोषण के लिए तर्क-युक्ति का सहारा भी खोजा जाने लगा। ज्ञान का, सत्य का, एकता का अभाव होता गया, द्वेष भाव बल पाता गया, जिसके परिणाम से अज्ञान बल द्वारा अनुचित के पोषण और आत्म सन्तोष के लिए प्रत्येक क्षेत्र के बुद्धिमान व्यक्तियों ने विभिन्न समयों में, विभिन्न स्थानों पर बैठकर, विभिन्न स्वार्थों को ध्यान में रख मत-वादों की सृष्टि की। धीरे-धीरे अज्ञान की छाया इतनी गहरी होती गई कि ज्ञान लुप्त सा हो गया सारी मानव जाति मतवादों की, मनुष्य कृत मार्गों की पथिक बन गई। इस प्रकार द्वेष के द्वारा धरती से धर्म का संकोचन और अधर्म से, अज्ञान से प्रेरणा प्राप्त मतवादों का प्रसार हुआ। जिसके फल-स्वरूप अविद्या अन्धकार से आत्मा की सुख-शान्ति और आनन्द का लोप हो गया।

o सत्य एक है। जो भारत के लिए सत्य है वही अन्य देशों के लिए भी है। धर्म और सत्य दोनों साथ-साथ चलते हैं। सत्य शाश्वत है। तीनों कालों में एक सा होता है।

o जो पदार्थ सत्य है उसके गुण, कर्म और और स्वगत भी सत्य होते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दार्शनिक चिन्तन

१. मैंने गुलाब से कहा—"तुम सदा प्रसन्न कैसे रहते हो ?"
फूल ने कहा—"मैं किसी बात की कभी कोई चिन्ता नहीं करता।"

२. मैंने फुटबाल से कहा—"क्या कारण है कि तुम जिसके चरण में शरण मांगने जाते हो, वह तुम्हारे सिर पर कस कर ठोकर लगाता है ?"
फुटबाल बोला—"क्योंकि मेरे पेट में गरूर की हवा भरी है।"

३. मैंने चींटी से पूछा—"तुमने इतना छोटा शरीर क्यों धारण किया ?"
वह बोली—"ताकि बड़े शरीर वाले हाथी को मार सकूं।"

४. मैंने गाय से पूछा—"तुमको लोग मारते क्यों हैं ?"
गाय बोली—"जब तक पृथ्वी पर शैतान का राज्य है तब तक सीधे-सच्चे की मौत ही होती रहेगी।"

५. मैंने नदी से पूछा—"तुम कहाँ जा रही हो ?"
नदी बोली—"जहाँ से आई थी, वहीं जा रही हूँ।"

६. मैंने एक गृहस्थी को कहा—"आपका लड़का खानदान की मशाल होगा ?"
वह [पिता] बोला—"कभी-कभी मशाल से घर भी जल जाया करता है।"

७. मैंने बन्दर से पूछा—"तुम ऐसी घुड़की क्यों दिया करते हो ?"
बन्दर ने उत्तर दिया—"अगर घुड़की से काम चल जाये तो हमला क्यों किया जाए"

८. मैंने शैतान से पूछा—"तुम क्या किया करते हो ?"
शैतान बोला "ज्ञानी पर डाका डालता हूँ और प्रेमी को गोली से उड़ाता हूं।"

९. मुझसे किसी ने पूछा—"दोस्ती अच्छी या दुश्मनी ?"
मैंने कहा—दोस्ती है—"मीठा जहर" और दुश्मनी है "कड़वा जहर।"

१०. मैंने कोयले से पूछा—"क्या तुम पर कभी सफेदी न आएगी ?"
कोयले ने उत्तर दिया—"आएगी, पर जब मैं जल-भुनकर राख हो जाऊंगा तब।"

११. मैंने रात से सवाल किया—"तुम इतनी काली क्यों हो ?"
रात ने भेद खोला—"मुझे सूरज से नफरत है। और मैंने नफरत की सूरत देख ली।"

१२. मैंने पूछा—"क्यों ज्योतिषी जी आप इस कुंए में कैसे गिर पड़े थे ?"
वे बोले—"मैं आधी रात गये दूरबीन लेकर आसमान की तहकीकात करने निकला था।"
मैंने कहा—"बेहतर होता यदि आप आसमान की तहकीकात से पहले जमीन की तहकीकात कर लेते ज्योतिषी जी।"

१३. मैंने चांद से सवाल किया—"तुम सर्व प्रिय क्यों हो ?"
चाँद ने उत्तर दिया—"जब विधाता ने मुझसे कहा था कि संसार में से कोई एक चीज ले लो तो मैंने "प्रेम" को उठा लिया था।"

—भगवान देव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कलियुगी धर्म

'रिश्वत' का मतलब है 'ऋषिवत' रिश्वत ऋषियों जैसी है।
कोई काम नहीं रुक सकता, यह ताकतवर ऐसी है।

एक कहे तो चार दीजिये,
धन का जूता मार दीजिये,

इतने पर भी काम न हो तो फिर ऐसी की तैसी है ॥
सबको भेंट चढ़ाता चल, 'हकपानी' पहुँचाता चल।
एक एक के पांच पांच कर तिजोरियां लगवाता चल-
अपनी तोंद बढ़ाता चल, तिकड़म को अपनाता चल ॥
'जी हुजूर' कहते-कहते तुम तिजोरियां भर सकते हो।
अपनी सात-सात पुश्तों की दरिद्रता हर सकते हो।

मेल मुलाकातों के बल से,
दलबन्दी के दलदल छल से,

भला-बुरा, अन्याय-न्याय, जो कुछ चाहो कर सकते हो।
हाकिम के गुण गाता चल, बाबू से हाथ मिलता चल ॥
कभी-कभी चपरासी को भी 'मुठ्ठी गरम' कराता चल।
खाता और खिलाता चल, तिकड़म को अपनाता चल।
तरह तरह के बना बहाने, घर से पैसे लाया कर-
'लाट साब' बन ठाठ-बाट से दिन भर चाट उड़ाया कर-

चाहे तो स्कूल न जाना,
मगर सिनेमा भूल न जाना,

रोज सवेरे उठते-उठते, फिल्मी गाने गाया कर।
'प्रश्नोत्तरी' मंगाता चल, 'कुंजी' याद कराता चल-
इम्तहान में हर प्रकार से नकल की अकल लड़ाता चल-
टीचर को धमकाता चल, तिकड़म को अपनाता चल।

—निर्भय हाथरसी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi